मनुष्यात्मा के सम्बन्ध में
चार महा तत्व

२०२० वि०
देव समाज पुस्तकालय, मोगा ।

सूची ।

चौथा अध्याय।

विषय प्रवेश।

सब प्रकार के जीवित और अजीवित अस्तित्वों की समष्टि का नाम नेचर वा विश्व है। यह नेचर दो प्रकार की मूल वस्तुओं से संगठित है जिन में से एक का नाम जड़ वा भौतिक पदार्थ और दूसरी का नाम शक्ति है। नेचर अपनी इन दोनों वस्तुओं के साथ सदा से है और सदा रहता है। नेचर में यद्यपि उसकी इन दोनों वस्तुओं के परस्पर अविच्छिन्न सम्बन्ध के कारण उसके रूप में सदा परिवर्तन होता रहता है, तथापि इस परिवर्तन के कारण उन दोनों वस्तुओं की मात्रा में कभी और किसी प्रकार की कमी बेशी नहीं होती। नेचर की यह दोनों वस्तुएं परिवर्तित होकर भी अपनी अपनी मात्रा के विचार से सदा एक ही प्रकार की अर्थात् उतनी की उतनी ही रहती है। इसलिए वह दोनों ही अविनाशी हैं।

नेचर के जिस जीवित वा अजीवित विभाग में जिस जिस प्रकार का परिवर्तन होता है वह उसके अन्दर के किसी अटल नियम के द्वारा होता है और कभी और किसी दशा में आप से आप वा अदृश्य पुरुष नहीं होता। नेचर में आज जिस २ मात्रा में आक्सीजन और हाइड्रोजन गैस (दोनों एक एक प्रकार की हवा) रासायनिक विधि से आपस में मिलकर पानी का रूप ग्रहण करती हैं, उसी और केवल उसी मात्रा में आज से पचास सौ पांच सौ हज़ार और दस हज़ार वर्ष पहले भी यह दोनों मिलकर पानी बनती थीं। नेचर में

चौथा अध्याय ।

विषय प्रवेश ।

सब प्रकार के जीवित और अजीवित अस्तित्वों की समष्टि का नाम नेचर वा विश्व है । यह नेचर दो प्रकार की मूल वस्तुओं से संगठित है जिन में से एक का नाम जड़ वा भौतिक पदार्थ और दूसरी का नाम शक्ति है । नेचर अपनी इन दोनों वस्तुओं के साथ सदा से है और सदा रहती है । नेचर में यद्यपि उसकी इन दोनों वस्तुओं के परस्पर अविच्छिन्न सम्बन्ध के कारण उसके रूप में सदा परिवर्तन होता रहता है, तथापि इस परिवर्तन के कारण उन दोनों वस्तुओं की मात्रा में कभी और किसी प्रकार की कमी बेशी नहीं होती । नेचर की यह दोनों वस्तुएं परिवर्तित होकर भी अपनी अपनी मात्रा के विचार से सदा एक ही प्रकार की अर्थात् उतनी की उतनी ही रहती हैं । इसलिए वह दोनों ही अविनाशी हैं ।

नेचर के जिस जीवित वा अजीवित विभाग में जिस जिस प्रकार का परिवर्तन होता है वह उसके अन्तर के किसी अटल नियम के द्वारा होता है और कभी और किसी दशा में अनाप शनाप वा अटकल पच्चू नहीं होता । नेचर में आज जिस २ मात्रा में आक्सीजन और हाईड्रोजन गैस (दोनों एक एक प्रकार की हवा) रासायनिक विधि से आपस में मिलकर पानी का रूप ग्रहण करती हैं उसी और वजन उसी मात्रा में आज से पचास सौ पांच सौ हजार और दस हजार वर्ष पहले भी वह दोनों मिलकर पानी बनती थीं । नेचर में

मूलत जिस रूप की विधि से आज उससे नाति म अग्नि उत्पन्न होता है उसी प्रकार आज से हजारों वर्ष पहले भी उत्पन्न होता था। नचर म जस आज बादल (धुंध समार वा बादल) म जनाने स उस के बरा आवसीजन हुआ म साथ रासायनिक विधि के द्वारा मिलकर 'कारबोनिक एसिड' नामी एक प्रकार की जहरीली हवा बन जाती है वसे हि यह आज से हजारों वर्ष पहले भी बन जाते थे। नचर की जिस विधि से जैसे आज बादल उत्पन्न होते हैं, अथवा उन में बिजली प्रगट होती है, उसी विधि से आज से हजारों वर्ष पहले भी बादल उत्पन्न होते थे, और उनमें बिजली प्रगट होती थी। नचर में उस की जिस विधि से आज बादलों में से टपक टपक कर पृथ्वी पर गिरती है जिसे बारिश वा वृष्टि कहते हैं, उसी विधि से आज से हजारों वर्ष पहले भी यह गिरती थी। नचर में जैसे आज हम अपने केवल आदेश वा वचन व मन्त्र आदि के द्वारा किसी शुद्ध पानी को नशेदार शराब वा किसी मुर्दा लाश को हाथ के स्पर्श में नहीं बदल सकते हैं, वैसे हि आज से पहले भी उसे कोई मनुष्य नहीं बदल सका था। नचर में जैसे आज गेहूं का कोई भी पौदा बाजरे या मकई का पौदा नहीं बन सकता, वैसे हि आज से हजारों वर्ष पहले भी नहीं बना था। नचर में जैसे आज कोई मनुष्य बकरा और कोई बकरा मनुष्य के आकार में और कोई कबूतर खरगोश और खरगोश कबूतर के आकार में नहीं बदल सकता, वैसे हि आज से हजार वा दस हजार वर्ष पहले भी उन के आकारों में इस प्रकार का कभी कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। नचर में जैसे आज किसी मनुष्य स्त्री के गर्भ से कभी गधे या सूअर का बच्चा नहीं

पैदा होना वस ही आज से हजारो वर्ष पहले भी उस मे कभी उत्पन्न नही हुआ था।

वस्तुत नेचर के जीवित और अजीवित अस्तित्वो मे जब और जिस दशा मे किसी प्रकार का कोई परिवतन उत्पन्न होता है तब वह उसकी एसी अटल विधि के अनुसार होता है कि जो प्रत्येक काल मे पूर्ण विश्वास के योग्य होती है। इसी लिए जैसे आज से पचास वर्ष पहले रेल की गाडियों के चलाने वाले जन उस के भाप से भरे हुए एजिन पर यह विश्वास रखते थे कि वह उस भाप के बल से उन्हें सैकडो मील खीचकर ले जाएगा, वस ही वह उसी दशा मे उसकी ऐसी गति के विषय मे आज भी पूरा विश्वास रखते हैं और उनका ऐसा विश्वास सदा ठीक और सच्चा साबित होता है। और जैसे गृहिणियो की कोई स्त्री आज से पचास वर्ष पहले यह विश्वास रखती थी, कि जब आग के द्वारा सुलगाने मे वायने जल उठते हैं, तब उन के ताप से पानी गरम हो सकता है या खाने की एक या दूसरी चीज़ पक सकती है वस ही वह आज भी विश्वास करती है और उस का ऐसा विश्वास जैसे इस देश मे सच्चा प्रमाणित होता है वैसे ही इस दुनिया के और देशो मे भी। अब इस प्रकार के सब सत्यो मे जो २ सच्चे सिद्धान्त निकलते हैं वह यह हैं—

(१) नेचर सत्य और नित्य है।

(२) नेचर परिवतन शील है।

( ) नेचर के जिस किसी जीवित वा अजीवित अस्तित्व

वह उसकी एक वा दूसरी ऐसी विधि के अनुसार होता है कि जो अटल वा अचल होती है, और जिसके विरुद्ध कहीं और कभी कोई परिवर्तन नहीं होता, और नहीं हो सकता। अर्थात् नेचर के अन्तरगत जिस जिस अस्तित्व में जिस २ प्रकार का परिवर्तन उस की जिस २ विधि के द्वारा होता है, उस के अतिरिक्त कुछ नहीं होता, और उस ने अपने भीतर जिस किसी क्रिया वा घटना को असम्भव कर दिया है वह क्रिया वा घटना उस में कभी और किसी दशा में सम्भव नहीं होता। इसीलिए जो कुछ उस ने असम्भव कर दिया है, वह सदा से असम्भव रहा है, और जो कुछ उसने सम्भव कर दिया है, वह सदा सम्भव रहता है। नेचर अपनी ऐसी नाना अटल विधियों के विचार से सदा सच्ची और सदा विश्वास के योग्य रहा है, और वह अपनी इन अटल विधियों के विचार से हर एक के लिए सदा ही पूर्ण विश्वास के योग्य है।

(४) नेचर की कार्य्य विधि जब पूर्णतः अटल है, और उसके अन्तर गत प्रत्येक अजीवित वा जीवित अस्तित्व उस की इस अटल कार्य्य विधि के पूर्णतः अधीन है, तब जो मनुष्य इन सच्च तत्वों के देखने और उपलब्ध करने के योग्य बन गया हो, वह अपने अस्तित्व के विषय में नेचर की अटल सच्ची विधि वा व्यवस्था को छोड़ कर उसके विरुद्ध

किसी भी कहलाने वाले 'सवा पुरुष' का केवल या उसी की किसी कल्पित और मिथ्या विधि वा व्यवस्था या उसके किसी कथन वा उपदेश को सत्य मान कर ग्रहण नहीं कर सकता।

अब जब कि किसी जीवित वा अजीवित अस्तित्व में जिस प्रकार का कोई परिवर्तन होता है वह परिवर्तन अटकल पच्चू नहीं किन्तु नेचर की एक वा दूसरी नियत विधि या उस के किसी अटल नियम के द्वारा हि होता है तब उस नेचर के नियमों के द्वारा मनुष्य के शरीर में स्वास्थ्यकर वा स्वास्थ्य नाशक बल दायक वा बल नाशक, सौन्दर्य प्रदायक वा सौन्दर्य नाशक, जीवन वर्द्धक वा जीवन नाशक परिवर्तन उत्पन्न होता है वैसे हि उस की जीवनी शक्ति वा उस के आत्मा में भी, कि जिस के द्वारा उसका शरीर बनता और बन कर जीवित रहता है।

परन्तु इस पृथ्वी में करोड़ों मनुष्य बाल्यकाल में ही अपने पिता माता आदि से धर्म्म वा मजहब के नाम में नेचर के सत्यों के विरुद्ध नाना प्रकार की मिथ्या गप्पों के विश्वासी बन जाते हैं। इस के भिन्न वह अपने नीच अनुरागों और अपने नीच घृणाओं के कारण अपने आप भी नाना प्रकार के मिथ्याचारी बनते हैं और अपने विविध प्रकार के मिथ्याचारों के द्वारा अपने किसी नीच अनुराग वा नीच घृणा मूलक मनोरथ में सफल काम हो कर बहुत तृप्ति लाभ करते हैं, और किसी धर्म्म मिथ्या में नेचर के अटल नियम

[illegible] अनुसार [illegible] आत्मिक [illegible] की जो महा हानि होती है, उसे अनुभव [illegible] करता, और इसलिए उस [illegible] भी [illegible] करता है। फिर वह [illegible] अनुरागों और [illegible] घृणाओं [illegible] सुखी या [illegible] होने [illegible] और अपनी और औरों [illegible] जो कुछ हानियां [illegible] अपने या किसी और के आत्मिक [illegible] है उस का भी वह या तो कोई [illegible], वा किसी विषय में अपनी किसी [illegible] पाप या गुनाह आदि जान या [illegible] भी उस से [illegible] अपने आप को मजबूर पाता है। इसीलिए वह सुखार्थी होकर जिस २ प्रकार के सुख का तृप्त व अनुरागी होता है, उस की प्राप्ति के लिए वह सत्य और शुभ से विरुद्ध नाना प्रकार के मिथ्या और अशुभ का साथ देता है।

नेचर के विकास क्रम में मनुष्य अपने भीतर जिस जिस प्रकार के विविध सुख दायक नीच अनुराग और उन के विरोधी नाना दुख दायक विषयों के प्रति जो २ नीच घृणा भाव रखता रहा है उन के अधीन होने के कारण वह क्या अपने आत्मा के सार अस्तित्व और क्या उस के बनने और बिगड़ने वा जीवित रहने और मृत्यु प्राप्त होने के विषय में नेचर के जो अटल नियम हैं, उन से पूर्णत अन्धकार की दशा में अर्थात अबोधी वा अज्ञानी रहा है।

इसलिए इस प्रकार के अन्धकार ग्रस्त आत्माओं

के लिए नेचर के नियमानुसार यह आवश्यक रहा है कि एक ओर सत्य और नित्य नेचर और उस के अटल और पूर्ण विश्वास के योग्य सत्य नियमों के विषय में अज्ञानी रहकर और दूसरी ओर अपनी बढ़ी हुई कल्पना शक्ति से परिचालित होकर

(१) वह ऐसे मरे हुए जनों की मिथ्या बातों पर विश्वास करें, कि जो पहले उन के अधिपति वा नेता वा प्रभु रह चुके हों, और जो अपना स्थूल शरीर छोड़ने और सूक्ष्म शरीर ग्रहण करने के बाद उन से अपने लिए खान पान आदि विषयक नाना प्रकार की भेंट लेने और अपनी महिमा को सुन कर प्रसन्नता लाभ करने के लिए उन पर किसी विधि से यह प्रगट करें कि उन्हें विविध प्रकार के जो जो सुख मिलते हैं वह उन्हीं की कृपा वा प्रसन्नता से मिलते हैं, और उन पर जो २ नाना प्रकार की बीमारियां वा मुसीबत आती है, और उन्हें नाना प्रकार के जो २ कष्ट और दुख मिलते हैं वह सब उन्हीं के कोप के कारण उन्हें प्राप्त होते हैं। इस प्रकार के बहुत से मरे हुए जन जो देवता या देवी आदि नामों से पुकारे गए वह यह थे—

यहवा वा जहोवा, लाड गाड, अल्ला खुदा विष्णु ब्रह्मा, शंकर वा शिव गणेश भैरव विठोबा गूगापीर, खवाजा खिज़र, विष्णु की पत्नी लक्ष्मी शिव जी की पत्नी पार्वती, और दुर्गा काली, सीतला आदि अन्य देवियां। इन के भिन्न गौ आदि हितकर और सांप आदि महा हानिकारक पशुओं और पीपल और बड़ आदि वृक्षों और गंगा यमुना आदि

[illegible]।

(७) वह ऐसे उपा[illegible] के मिथ्या विश्वासी बनें, कि [illegible] [illegible] गये हुए स्वनामधन्य अपने आप को उन में से [illegible] अवतार या उन का सम्बन्धी या उस की ओर से [illegible] शास्ता, गुरु या रसूल या नबी या पैगम्बर आदि [illegible]। और जो नचर के नियमों के पूर्णतः विरुद्ध [illegible] के द्वारा अनेक प्रकार की अद्भुत क्रियाओं या करामातों को दिखाने की शक्ति रखने का आप दावा करें, या उन में ऐसी [illegible] की कल्पना करें और उन के द्वारा ऐसी करामातों के [illegible] उन से [illegible] आदि पाईं और उन का प्रचार करें।

(८) वह स्वरचित जगत के सम्बन्ध में अपने मिथ्या विश्वास के कारण उन की शिक्षा के अनुसार किसी देवता या देवी को "सृष्टा" और "सर्व शक्तिमान" मानकर उसे अपना उपास्य या माबूद मानें, और वह उस उपास्य देवता के नाम से उन्हें उन के धर्मों और उन के देवता और आत्मा के अस्तित्व और उन के जीवन के सम्बन्ध में जिन २ बातों की शिक्षा दें, वह चाहे आपस में एक दूसरे से विरोध भी रखती हों, और चाहे वह नचर के किसी नियम के पूर्णतः विरुद्ध होने से पूर्णतः मिथ्या भी हों, तो भी वह उन्हें सत्य मानकर उन पर विश्वास करें। और यदि वह किसी कहलाने वाले "बैकुण्ठ" या स्वर्ग या बहिश्त या "पैरेडाईज" आदि स्थानों के सुखों या किसी कहलाने वाले "नरक" या "जहन्नुम" या 'हेल' आदि किसी स्थान के दुःखों के विषय में कोई शिक्षा दें, तो उन की यह शिक्षा भी चाहे नचर के नियमों के कैसी ही विरुद्ध और इसीलिए झूठी

क्या न हो, तो भी वह उस पर विश्वास करे और उन में से पहले के सुखों की लालसा के वशीभूत होकर और दूसरे के डर से वह अपने २ मिथ्या विश्वास की गहराई के सुआफिक उन की किसी ऐसी इच्छा के पूर्ण करने के लिए भी तैयार हो जाए कि जो नेचर के नियमानुसार सर्वथा पाप मूलक हो और उन के लिए अपने तन मन धन और प्राण आदि अर्पण करके अपना और औरों का विविध प्रकार से अहित साधन करें।

इन मिथ्या विश्वासों के भिन्न हमारे देश में बड़ा ही एक महा हानिकारक और मिथ्या शिक्षा न कि यह जगत् मिथ्या वा भ्रम वा माया है जब कि यह जगत् वा नेचर ही सत्य है हमारे देश के लोगों को सहस्रों वर्षों से इस योग्य ही नहीं रक्खा कि वह नेचर को उसके सत्य और नित्य रूप में देखने का अवसर पाते, और उसे पूर्ण विश्वास के योग्य जान कर उस के विषय में सत्य ज्ञान लाभ करने के आकांक्षी बनते और इस अमूल्य सत्य ज्ञान की प्राप्ति के लिए अपने मन और तन और धन आदि को अर्पण करने में अपना श्रेष्ठ अधिकार अनुभव करते। फिर भी मनुष्य जगत् के विकास में भारत और यूनान आदि देशों की विज्ञान विषयक कुछ प्राचीन उन्नति को छोड़कर पश्चिमी देशों में पिछले डेढ़ सौ वर्षों में एस विज्ञान हितैषी सत्यक लोगों की उत्पत्ति हुई है, कि जिन के भीतर नेचर के विषय में कल्पना मूलक गप्पों का त्याग करके किसी सच्ची विधि से अनुसन्धान करने की प्रबल आकांक्षाए जाग्रत हुई ... ने उस के विषय में ...

न मनुष्यता न्यकर उसने निज अपना तन और मन और धन आदि अर्पण करके अपने उस प्रशंसनीय त्याग के द्वारा उस ने प्रा र में इन अमूल्य सत्य ज्ञान लाभ किया है। इस की सत्य ज्ञान का नाम "विज्ञान" है और इस प्रकार के ज्ञान के लाभ करने का जो सत्य विधि है, उसी का नाम वैज्ञानिक विधि है।

अब जहा यह सत्य है, कि नेचर के अनुसन्धान में वैज्ञानिक विधि का ग्रहण करके हि कोई मनुष्य उसके विषय में सत्य ज्ञान लाभ कर सकता है वहां यह भी सत्य है कि नेचर के किसी भौतिक आकार का उस की किसी शक्ति के विषय में सत्य और साक्षात् ज्ञान लाभ करने के लिए नेचर के नियम के अनुसार उस यथेष्ट अवलोकन की जरूरत है, क्योंकि ऐसे अवलोकन के लिए चक्षु इन्द्रिय और उस में छवि उत्पादक ज्योति और उस छवि को यथार्थ रूप में देखने और जानने के लिए हार्दिक अनुराग और उन्नत शील मानसिक शक्तियों की भी आवश्यकता है। अब यदि कोई मनुष्य अपने चेहरे पर आखें रखता हो, और उन के द्वारा किसी भौतिक वस्तु का यथेष्ट अवलोकन करके उस के विषय में किसी सत्य ज्ञान के लाभ करने का आकांक्षी भी बन गया हो परन्तु जो ज्योति उस वस्तु के रूप को उस के भीतर प्रकाशित कर सकती है, वही ज्योति यदि उसे प्राप्त न हो, तो भी वह उस के रूप को नहीं देख सकता, और उस के विषय में कोई साक्षात् सत्य ज्ञान लाभ नहीं कर सकता। फिर भौतिक आकारों से ऊपर निर्जीव और फिर उन से भी ऊपर सजीव शक्तियों के विषय में नाना

ग्रात्मा म जिन देव शक्तियों की उत्पत्ति और उन्नति से हो सकता है उस देवात्मा का जब तक इस पृथ्वी म आविर्भाव नहा हुआ था, तब तक उपरोक्त गन्या का मिलना उस किसी ओर के लिए पूर्णत असम्भव था, वैसे हि उनका ज्ञान भी इस पृथ्वी म किसी ओर को नहीं हुआ था। और मनुष्य जगत के करोडा जन उपरोक्त आठों प्रकार के जिन महा हानिकारक मिथ्या विश्वासों म ग्रस्त रहे, उन म उन का या तो पूर्णत उद्धार नहीं हुआ, अथवा जो यदि से जन अपनी प्रबल मानसिक ज्याति के कारण उन मिथ्या विश्वासों का छोड कर किसी भी धर्म मत के विश्वासी नहीं रहे, उन्हें भी सत्य नेचर पर स्थापित अपने आत्मा के सम्बन्ध म कोई सत्य ज्ञान नही मिला, और वह उन मिथ्या विश्वासों को छोड कर भी आत्मिक सत्य ज्ञान के विचार से पूर्णत अन्धकार की दशा मे रहे हैं।

देवात्मा ने प्रगट होकर और देव शक्तिया को विकसित करके जसे एक ओर उपरोक्त मिथ्या विश्वासों या धर्म मतो की हकीकत को देखा है, वसे ही उस ने दूसरी ओर मनुष्य आत्मा के गठन प्राप्त सत्य अस्तित्व और उस के विगडने और बनने और उस के पतन और उस की मृत्यु और उस के पतन से उस की रक्षा मार्ग और उस के जीवन के विकास के सम्बन्ध मे नेचर सम्मत और विज्ञान-मूलक जो २ सत्य देखे और जाने हैं, वह उससे पहले कोई नहीं देख वा जान सका था, हा कोई "सर्वज्ञ" कहलाने वाला ईश्वर वा परमेश्वर वा उस का कोई अवतार वा कोई बुद्ध वा तीर्थंकर वा योगी वा मुनि वा ऋषि वा महर्षि आदि भी इस

महा दुर्लभ ज्ञान को प्राप्त नहीं कर सका था। इसी महा दुर्लभ ज्ञान को पाकर मैंने आत्मा के सम्बन्ध में जिन चार महा तत्वों की शिक्षा दी है और जो नित्य सत्य नेचर और उस की वनानिर विधि के पूर्णतः अनुसार होने के कारण पूर्णतः सत्य है उन को मैंने इस पुस्तक में आवश्यक विस्तार के साथ वर्णन किया गया है।

मनुष्य जगत् के विकास में ज्यों २ उन लोगों की उत्पत्ति और संख्या बढ़ती जाएगी, जो इन चारों महा तत्वों को दिखाने वाली देव ज्योति के पाने के अधिकारी होंगे त्यों २ मनुष्य जगत में उन के अधिक से अधिक ग्रहण करने और विश्वासियों की संख्या भी बढ़ेगी, और इस पृथ्वी में धर्म वा मजहब के नाम से उपरोक्त प्रकार की जितनी मिथ्या शिक्षा जारी है, वह एक और जैसे धीरे २ विनष्ट होती जाएगी वैसे ही दूसरी ओर उपरोक्त सत्य ज्ञान के प्रचार से जहां तक मनुष्य जगत् का कल्याण सम्भव है वहां तक मनुष्य जगत् का और उस के भिन्न नेचर के और जगतों का भी एक वा दूसरी प्रकार से हित सम्पादन होगा।

देव समाज में ऐसे स्त्री पुरुषों की बहुत बड़ी आवश्यकता है जो एक ओर जहाँ मनुष्यात्मा के सम्बन्ध में देवात्मा की सत्य शिक्षा को भली भांति अध्ययन करने और समझने के योग्य हों, वहां दूसरी ओर उन में उस का प्रचार और उसके द्वारा मनुष्यात्माओं को उपरोक्त प्रकार के मिथ्या विश्वासों वा मिथ्या धर्म मतों से उद्धार करने के लिए [illegible] हार्दिक अनुराग हो।

न्न म उत्पन्न हों, और वह सत्य के साथी और मिथ्या के द्वेषी होकर और देव समाज की जय पताका को हाथ में लेकर उस की जय के लिए सब प्रकार की आवश्यक सेवा करके मनुष्य जगत् के उपकार साधन के पात्र बनें, और उसके देव प्रभावों को पाकर और सब मिथ्या मतों के नष्ट करने के लिए प्रतिज्ञा बद्ध होकर जिस २ स्थान में और जहां २ तक उसके लिए संचार का सम्भव रक्खा हुआ हो, उस २ स्थान में पहुंच कर और वहां २ तक ऐसी जय लाभ करके अपने मनुष्य जन्म को सुफल करें। ऐसा हो, कि मनुष्य जगत् के विकास क्रम में ऐसे प्रचारक जहां तक शीघ्र और अधिक से अधिक संख्या में उत्पन्न हो सकते हों, वहां तक वह शीघ्र और अधिक से अधिक संख्या में उत्पन्न हों।

स० स० अ०

देवात्मा श्री देवगुरु भगवान्

की

विज्ञान मूलक धर्म्म शिक्षा।

पहला भाग।

पहला अध्याय।

मनुष्य के सम्बन्ध में चार महा तत्वों की शिक्षा।

प्रश्न। देवात्मा श्री देवगुरु भगवान् ने देव जीवन को प्राप्त और उस में विकसित होकर मनुष्य के सम्बन्ध में जो ४ नए तत्व प्रगट किए हैं, वह क्या हैं?

उत्तर। उन में से वह ४ तत्व यह हैं —

पहला महा तत्व।

प्रत्येक मनुष्य का अस्तित्व उस की निज [illegible] जीवनी शक्ति और उस के जिस गठन प्राप्त [illegible] से संयुक्त होता है उस [illegible] गठन प्राप्त [illegible]

हि मुख्य वा मूल वस्तु है । मनुष्य की इस गठन प्राप्त जीवनी शक्ति का दूसरा नाम आत्मा है ।

प्रश्न । मनुष्य का गठन प्राप्त जीवनी शक्ति से क्या अभिप्राय है ?

उत्तर । मनुष्य के अस्तित्व में उस की वह विशेष शक्ति कि जो उस के शरीर का निर्माण करती है, उसे जीवित रखती है उस की रक्षा वा पालना करती है, और उसे हिला जुला कर एक वा दूसरे प्रकार का काम करती है अपनी इन कई क्रियाओं के विचार से उस की गठन प्राप्त जीवनी शक्ति कहलाती है। मनुष्य के अस्तित्व में उस की यही गठन प्राप्त जीवनी शक्ति मुख्य वा मूल वस्तु है, इसीलिए उस के विषय में सत्य ज्ञान लाभ करने के योग्य होना मनुष्य का सब से बढ़ कर आवश्यक काम और बहुत बड़ा अधिकार है ।

प्रश्न । मनुष्य के भिन्न क्या किसी जातिय पशु वा पौद में भी इसी प्रकार की गठन प्राप्त जीवनी शक्ति होती है ?

उत्तर । जी हां । प्रत्येक जीवित पशु और पौद के शरीर में एक २ गठन प्राप्त जीवनी शक्ति होती है । इस के भिन्न जो पौद फल वा दाने उत्पन्न करते हैं उन के ठीक पके हुए फलों के दानों में भी उन्न सी ऐसी हि जीवनी शक्तियां होती हैं ।

प्रश्न । यह क्योंकर मालूम हो, कि प्रत्येक मनुष्य के शरीर की निर्माणकर्त्ता उस की अपनी हि गठन प्राप्त जीवनी शक्ति है और उसे 'ईश्वर' आदि नामक किसी 'हस्ती' ने नहीं बनाया ?

उत्तर । वैज्ञानिक परीक्षा के द्वारा इस ज्ञान का सच्चा

और पूरा प्रमाण मिल सकता है ।

प्रश्न । ऐसा कच्चा परीक्षा क्योंकर हो सकता है ?

उत्तर । यदि किसी चार या पाँच मास की गर्भवती स्त्री का भ्रूणपात हो गया है तो उस के गर्भाशय में उस भ्रूण या बच्चे के शरीर का उस की जो गठन प्राप्त जीवनी शक्ति उस स्त्री के रुधिर से आवश्यक सामग्री लेकर निर्म्माण कर रही थी, उस का वह निर्म्माण कार्य पूर्णत बन्द हो जाएगा, और फिर वह भ्रूण कभी और किसी प्रकार से अपनी पूरी गठन को प्राप्त न हो सकेगा ।

प्रश्न । किसी और विधि से भी इस सत्य की परीक्षा हो सकती है ?

उत्तर । जी हाँ ! तुम जीवित गेहूँ के कुछ दानों को खौलते हुए पानी में डाल दो ऐसा करने से कुछ देर में उस पानी की ताप शक्ति से उन दानों की जीवनी शक्तियाँ नष्ट हो जाएंगी अर्थात् मर जाएंगी । फिर उन दानों को तुम ठीक मौसम में और अच्छे से अच्छे खेत की नरम और नमदार मट्टी में बो दो परन्तु तुम देखोगे कि दिन पर दिन गुजरते जा रहे हैं परन्तु वह दाने फूटने में नहीं आते और उन में से कोई भी गेहूँ का पौदा नहीं उगता, क्योंकि उन के अन्दर जो गठन प्राप्त जीवनी शक्तियाँ वर्तमान रहकर उन में गेहूँ के पौदे निर्म्माण कर सकती थीं उन के नष्ट हो जाने से उस निर्म्माण के काम को करने वाला कोई और न रहा । इसीलिए उन के पौदों के निर्म्माण का काम सदा के लिए बन्द हो गया । यद्यपि ईश्वर वादियों के विश्वास के मुताबिक उन के सत्य और जीवन ईश्वर क्या उन दानों में (कि जिन की शरीर निर्म्माणकारी जीवनी शक्तियाँ ताप से नष्ट हो गई हैं) और क्या उस मट्टी में कि जिस में वह दाने बोए गए

हैं, सर्वज्ञ और सर्व शक्तिमान और सृष्टा वा रचना कर्ता रूप में वर्तमान हैं, तथापि वह उन अजीवित वा मुरदा दानों में से कोई पौदा उत्पन्न नहीं कर सकते। यद्यपि यह सच है कि ऐसे किसी ईश्वर का अस्तित्व ही मिथ्या है, तथापि यदि कोई सचमुच का जीवित मनुष्य भी [कि जिस का अस्तित्व मिथ्या नहीं] उन में से कोई पौदा उत्पन्न करना चाहे, तो वह भी उत्पन्न नहीं कर सकता क्योंकि नेचर ने ऐसा होना असम्भव किया हुआ है। और जो कुछ नेचर ने सम्भव नहीं रक्खा, उसे कोई सत्य अस्तित्व भी सम्भव नहीं कर सकता।

फिर यदि तुम पशु जगत् में इसी तत्व की परीक्षा करना चाहो, तो जो लोग मुर्गियों के अण्डों को गरम पानी में डाल कर और उन्हें पकाकर खाते हैं, उन में से किसी से एक ऐसा पका हुआ अण्डा कि जिस की जीवनी शक्ति नष्ट हो चुकी हो, ले आओ। फिर तुम चाहे उसे किसी मुर्गी के नीचे रक्खो, और चाहे उसे किसी और विधि से सेने की कोशिश करो, परन्तु उस में से कभी कोई बच्चा पैदा न होगा, क्योंकि उस अण्डे के भीतर का जो शरीर निर्म्माणकारी जीवनी शक्ति अनुकूल दशा में उस की सामग्री से एक मुर्गी का जीवित बच्चा बना सकती थी वह निर्म्माणकारी जीवनी शक्ति जब न रही तब उस के भिन्न कोई और उस की उस सामग्री में कोई जीवित बच्चा नहीं बना सकता—हां, ईश्वर वादियों के ईश्वर भी उस में से फिर कोई जीवित बच्चा नहीं बना सकते और नहीं उत्पन्न कर सकते। सच्ची नेचर के सच्चे अटल नियम के अनुसार बिना उस शरीर निर्म्माणकारी जीवनी शक्ति के जो कि उस अण्डे में पहले वर्तमान थी, और जो ताप शक्ति के द्वारा नष्ट हो गई और

कोई 'देवता' या मनुष्य वा कोई और अस्तित्व उस अण्डे में से कोई जीवित शरीर निम्माण नही कर सकता ।

प्रश्न । क्या नचर में कुछ ऐसी जीवनी शक्तियां भी हैं कि जो जीवन तो रखती हैं, परन्तु अपने लिए किसी जीवित शरीर के निर्माण करने की कोई सामर्थ्य नही रखती ?

उत्तर । जी हां, प्रत्येक जीवित मनुष्य, पशु और पौदे के शरीर के नाना भागों के जीवित "सेलों" में ऐसी जीवनी शक्तियां होती हैं कि जो किसी जीवित शरीर के निर्माण करने की कुछ भी योग्यता वा सामर्थ्य नही रखती । दृष्टान्त स्थल में — जिन पौदों की कलम काट कर और उन्हें अनुकूल ऋतु और भूमि में लगाकर और उन की विधि पूर्वक पालना करके नए पौदे वा वृक्ष उत्पन्न किए जाते हैं, उन पौदों में कितनी हि शाखाएं ऐसी होती हैं, कि जिन की जीवित 'सेलों' में कुछ भी शरीर निर्माणकारी जीवनी शक्तियां नही होती, और इसलिए यदि उन में से अनुकूल ऋतु में कलम काट कर अनुकूल भूमि में लगाई जावें, और विधि पूर्वक उन की पालना की जाय तो भी उन में से किसी कलम में से कोई पौदा वा वृक्ष उत्पन्न नही हो सकता । इस के भिन्न कई प्रकार की धातुओं में जो जीवनी शक्तियां पाई जाती हैं वह भी जीवित शरीर निम्माण करने की कोई योग्यता नही रखती ।

प्रश्न । क्या कुछ धातुओं में भी जीवनी शक्तियां पाई जाती हैं ?

उत्तर । जी हां, और वह अपने जीवन विषयक विशेष लक्षणों की वर्तमानता में पहचानी जाती हैं ।

प्रश्न । वह लक्षण क्या हैं ?

उत्तर । जिस किसी धातु में जीवनी शक्ति वर्तमान हो,

इस पर यदि किसी तेज़ विष द्रव्य का प्रयोग करके इस पर कुछ चोट लगाई जाय, तो यह धातु इस से उत्तेजित होकर एक कागज़ पर जो उस यन्त्र के साथ लगा हुआ होता है कुछ खास किस्म की लकीर खेंचती है। यदि उस पर किसी विष का प्रयोग किया जाय, तो उस से भी उत्तेजित होकर यह उसी प्रकार की क्रिया करता है। यदि इस क्रम को जारी रक्खा जाय, तो यह धीरे २ अपना जीवन बल खोना आरम्भ करती है, और कुछ काल के बाद अपना जीवन बल को पूरा खोकर मर जाती है। और जब वह पूरी मर जाती है, तब फिर उस धातु पर चोट लगाने या उस पर किसी विष के प्रयोग करने से पहले की तरह कोई लकीरें नहीं निकलता, और उस की कोई शक्ति पहले प्रकार के कोई लक्षण प्रगट नहीं करता।

प्रश्न। क्या छोटे या बड़े पौदों पशुओं और मनुष्यों के जीवित शरीरों में जो जीवनी शक्तियां होती है, वह सब एक ही प्रकार की होती है?

उत्तर। नहीं, वह सब अपने अलग २ अस्तित्व और अपने भिन्न २ बल और एक दूसरे से अपने और कई गुणों या लक्षणों के विचार से विभिन्नता रखती हैं। वृक्षों में जो गठन प्राप्त जीवनी शक्तियां होती है वह साधारणतः अपने शरीरों के लिए जीवन रहित मट्टी, पानी, वायु और सूर्य की ज्योति और ताप शक्ति से सामग्री लेकर जीवित "सेल" निर्म्माण करने की सामर्थ्य रखती हैं, परन्तु पशु या मनुष्य की जीवनी शक्तियों में ऐसी कोई सामर्थ्य नहीं होती, अर्थात् वह केवल अजीवित जगत् की सामग्री से अपने लिए कोई जीवित शरीर नहीं बना सकती।

फिर पशु और मनुष्य का जीवनी शक्तिया साधारणत अपने २ शरारा को एक स्थान से दूसरे स्थान मे ल जाने की जो सामथ्य रखती हैं, वह सामथ्य साधारणत पादा का जावनी शक्तिया नहीं रखती। इसी प्रकार मनुष्य की जावनी शक्तिया साधारणत जिस जिस प्रकार की उन्नतशील मानसिक शक्तियां रखनी हैं, वह पशु जगत् का जीवनी शक्तियां नहीं रखती। परन्तु इस प्रकार की विभिन्नता रख कर भी वह सब अपने मूल लक्षणो के विचार मे एक हि प्रकार की होती है।

प्रश्न। उन सब के मूल लक्षण क्या हैं ?

उत्तर। उन मे से प्रत्यक हि अपने २ लिए अनुकूल दशा मे

(१) एक वा दूसरे प्रकार के जावित शरीर के निर्म्माण करन

(२) उस के प्रतिपालन करन

(३) उस की एक वा दूसरी सीमा तक रक्षा करन, और

(४) एक वा दूसरी विधि स एक स अधिक हो जान,

की सामथ्य रखती हैं।

यह मूल लक्षण क्या उद्भिद् क्या पशु और क्या मनुष्य सभी जगतो की जीवनी शक्तियों मे पाए जाते हैं।

प्रश्न। जो जड वादी लोग यह कथन वा विश्वास करते है, कि मनुष्य क आत्मा का अपना अस्तित्व कुछ भी नही, किन्तु वह उस के जीवित जड शरीर का हि प्रकाश मात्र है उन का यह कथन कसा है ?

उत्तर। पूरन मिथ्या है, क्योंकि जिस दशा मे मनुष्य की शरीर निर्म्माणकारी जीवनी शक्ति कि जिस का दूसरा नाम आत्मा है, उसके जीवित जड शरीर की प्रकाशक है तब वह आप उस का प्रकाश नही हो सकती। मनुष्य का आत्मा हि उस के शरीर के पिंजर, मास, रुधिर की नालिया और स्नायु जाल को बना कर प्रगट करता है। मनुष्य का आत्मा हि उस के शरीर के मस्तिष्क, आखा, काना, नाक, मुह फेफडा, हृदय पिंड, पाक स्थली, यकृत, अनतडिया, जननेन्द्रियो और हाथो और पावो आदि सब अंगो की रचना करता है। वही उस के सारे अंग विशिष्ट शरीर का प्रकाश कर्ता हैं। वह न हो, ता इस पृथ्वी म कही भी किसी मनुष्य का शरीर न हो, इस लिए केवल यही नही, कि वह अपने जीवित शरीर का आप प्रकाश नही किन्तु उसके विपरीत वही अपने जीवित शरीर का निर्म्माता और प्रकाशक है। इसलिए जड वादिया का यह कहना वा विश्वास करना कि आत्मा आप अपना कोई अलग अस्तित्व नही रखता, किन्तु वह शरीर का हि एक प्रकार का प्रकाश है, नेचर के अटल सत्य के पूरन विरुद्ध है, और वह केवल उन की अपनी मिथ्या कल्पना है। वास्तव म मनुष्य के अस्तित्व मे उस का आत्मा हि मूल और मुख्य पदार्थ है। उस क विषय म मूढ वा अज्ञानी वा अन्धकार मे रहना उस का सब स बडा दुर्भाग्य और उस के विषय म सत्य ज्ञान लाभ करने के योग्य होना उस का सब से बडा सौभाग्य है।

दूसरा अध्याय।

मनुष्य के सम्बन्ध में दूसरा महातत्व

पहला परिच्छेद।

प्रश्न। श्री देवगुरु भगवान् ने मनुष्य के सम्बन्ध में जो दूसरा महा तत्व प्रगट किया है, वह क्या है?

उत्तर। प्रत्येक मनुष्य के आत्मा का उसके शरीर के साथ अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है, अर्थात् जैसे आत्मा से जुदा होकर मनुष्य का जीवित शरीर जीवित नहीं रहता और मर जाता है, वैसे हि आत्मा भी अपने लिए किसी जीवित शरीर के निर्म्माण न कर सकने और उस के साथ सम्बन्धित न होने पर जीवित नहीं रहता और मर जाता है।

प्रश्न। आत्मा के छोड़ देने पर उस का जीवित शरीर तो अवश्य मर जाता है, परन्तु किसी जीवित शरीर के बिना आत्मा क्यों नहीं जीवित रहता?

उत्तर। क्योंकि आत्मा किसी मस्तिष्क और स्नायु जाल आदि सम्पन्न जीवित शरीर में सम्बन्धित होने के बिना अपने अस्तित्व विषयक किसी लक्षण का प्रकाश नहीं कर सकता अर्थात् वह उसके बिना न कभी किसी प्रकार का कोई काम वा किसी प्रकार का कोई ज्ञान लाभ कर सकता है, न कभी किसी प्रकार

ुग ता दुग नोध कर सकता है, न सभी किसी के न ना, अनुराग या घृणा अनुभव कर सकता है, और ना शारीरिक प्रतिज्ञ सम्बन्धी किसी और लक्षण का न ना करता है, इसीलिए किसी सत्य प्राण जीवित शरीर के निर्माण करने और उसके साथ सम्बन्धित होने के बिना व ह आप न ही जा सकता जब कि उस के बिना उसका निम्माण किया हुआ यह जीवित शरीर भी जीवित नहीं रह सकता।

प्रश्न। क्या कारण है कि मनुष्यात्मा अपने स्थूल शरीर को त्याग करने पर वह उस से अलग जीवित नहीं रहता?

उत्तर। यदि कोई मनुष्यात्मा अपने स्थूल शरीर से त्याग करने पर अपने लिए किसी कारण से कोई जीवित सूक्ष्म शरीर निम्माण करने के योग्य न हो सका, तो वह अवश्य जीवित नहीं रहता।

प्रश्न। कोई आत्मा अपने स्थूल शरीर के छोड़ने और सामर्थ्य रखने पर अपने लिए सूक्ष्म शरीर क्योंकर निम्माण करता है?

उत्तर। वह अपने स्थूल शरीर को त्याग करने से पहले उस के नाना मे लवर सिर तक उस के प्रत्येक अंग से सूक्ष्म जीवित "सत्ता" को निकाल कर उन्हें अपने स्थूल शरीर के सिर से बाहर एकत्र करता है, और इन एकत्रित जीवित "सत्ता" से अपनी शरीर निम्माणकारी शक्ति के द्वारा वह कुछ देर में अपने पहले स्थूल शरीर के ठीक अनुरूप और उसी के बराबर एक और नया जीवित शरीर निम्माण कर लेता है, और फिर उस के बन चुकने पर उस के साथ सम्बन्धित होकर

अपने अस्तित्व विषयक विविध लक्षणो के प्रकाश करने के योग्य बन जाता है ।

प्रश्न । सूक्ष्म जीवित 'सल' क्या होते हैं ?

उत्तर । मनुष्य के स्थूल शरीर में वह कई प्रकार के जीवित 'सल' कि जो उस के स्थूल शरीर के स्थूल "सलो" की अपेक्षा बहुत छोटे, हलके और बारीक होते हैं, सूक्ष्म सैल होते हैं ।

प्रश्न । स्थूल जीवित सल क्या होते हैं ?

उत्तर । स्थूल जीवित सल मनुष्य के शरीर में उन अत्यन्त छोटे २ जीवित कणों वा कोठडियों को कहते हैं, कि जिन से उस का कुल शरीर उसी प्रकार बनता है, जिस प्रकार लाखों ईंटों से कोई बड़ा मकान बनता है । यही जीवित सल एक २ मनुष्य के शरीर में करोड़ों और अरबों की संख्या में होते हैं ।

प्रश्न । कोई आत्मा अपने स्थूल शरीर में सूक्ष्म जीवित सैल बनाने की कब योग्यता लाभ करता है ?

उत्तर । जब वह किसी स्त्री के गर्भाशय में अपने लिए जिस स्थूल शरीर को विविध प्रकार के स्थूल जीवित सलों के द्वारा निर्माण करता है उन के गठन विषयक नाना आवश्यक अंगों को पूरा कर लेता है और उस गर्भाशय से निर्विघ्न रूप से इस पृथ्वी में जन्म ले लेता है, और फिर उस के अनन्तर अपने इस गठन प्राप्त परन्तु असहाय शरीर की पालना का प्रबन्ध होने पर धीरे २ अपनी निर्माणकारी शक्ति के बल को क्रम २ से कुछ और उन्नत करने का अवसर पा लेता है तब इस पृथ्वी में जन्म लेने के कई सप्ताह के अनन्तर वह अपने स्थूल शरीर के स्थूल जीवित सलों के अनुरूप सूक्ष्म जीवित सलों

– ता र न स र उ र अपना न गी – म गमन करने की योग्यता प्राप्त करता है।

प्रश्न। क्या सूक्ष्म सत्ता के द्वारा अपने लिए किसी सूक्ष्म ना र के ! स्मारा करने की सामर्थ्य लाभ करने पर फिर कोई न –ा हो –ना ?

उत्तर। यदि वह किसी प्रतिकूल अवस्था के उत्पन्न होने पर उस सूक्ष्म स ा की अपने स्थूल शरीर में निकालने और उस पर स्वाधीनता … करके शरीर निर्माण करने का अवसर न पा सके तो वह अपने लिए कोई सूक्ष्म शरीर निर्माण नहीं कर सकता और इसीलिए मृत्यु को प्राप्त होकर नष्ट हो जाता है।

प्रश्न। वह कौन २ से कारण हैं, कि जिन के उत्पन्न होने से मनुष्य की आत्मा अपने लिए कोई स्थूल या सूक्ष्म शरीर निर्माण नहीं कर सकता ?

उत्तर। वह चार कारण हैं।

प्रश्न। कौन २ से ?

उत्तर। —

(१) जीवित शरीर निर्माण करने के लिए जिस सामग्री की आवश्यकता है उस से वंचित हो जाना अर्थात् मनुष्य का जब कोई बच्चा किसी स्त्री के गर्भाशय में कुछ दिन तक निर्मित होने के अनन्तर किसी दुर्घटना से उस से बाहर निकल आता है, कि जो भ्रूणपात वा दसवात हमल कहलाता है, तब फिर वह गर्भाशय से बाहर आकर और माता के रुधिर की आवश्यक सामग्री की प्राप्ति और उस उचित विधि से वह कर जिस के द्वारा वह उस सामग्री को लाभ करता था न तो अपने लिए उस शरीर को और अधिक संगठित कर सकता है, और न उसे किसी प्रकार से जीवित

रख सकता है, इसलिए अपने ऐसे अधूरे शरीर की मृत्यु के साथ हि वह आप भी मर जाता है।

(२) सूक्ष्म सेला के बनाने की हि योग्यता वा सामर्थ्य न रखना, अर्थात् यदि किसी मनुष्य का कोई उच्चा ठीक समय और पूर्ण आकार वा पूर्ण अंगों को प्राप्त होकर भी उत्पन्न हो, तो भी उस का आत्मा कई सप्ताह तक अपने भीतर इतना बल विकसित नहीं करता, कि जिस के द्वारा वह अपने स्थूल शरीर में किसी प्रकार के भी सूक्ष्म सेल निर्म्माण कर सके। इसलिए इन दिनों में यदि किसी बिमारी वा अन्य दुर्घटना के कारण उस के शरीर की मृत्यु हो जाय, तो वह अपने स्थूल शरीर की मृत्यु के साथ हि आप भी मर जाता है।

(३) सूक्ष्म सेला को शरीर से बाहर निकालने और उन्हें एकत्र करके सूक्ष्म शरीर के बनाने का अवसर हि न पाना अर्थात् यदि किसी आत्मा में अपने शरीर में सूक्ष्म सेलों के बनाने की योग्यता भी उत्पन्न हो गई हो, और उसके स्थूल शरीर में सूक्ष्म शरीर निर्म्माण करने के लिए यथेष्ट मात्रा में सूक्ष्म सेल भी वर्तमान हों, और वह आवश्यकता के समय उन्हें निकाल कर सूक्ष्म शरीर निर्म्माण भी कर सकता हो परन्तु यदि कोई ऐसी दुर्घटना पैदा हो, कि जिस में पड़कर वह अपनी इन दोनों प्रकार की क्रियाओं में से किसी क्रिया के करने का अवसर हि न पा सके तो भी वह अपने लिए एक नए सूक्ष्म शरीर के निर्म्माण न कर सकने के कारण आप भी नष्ट हो जाता है। यथा—

(अ) जब अग्नि के प्रचंड ताप से किसी मनुष्य का शरीर हठात् चारों ओर से इतना घिर जाए कि जिस में उस का आत्मा उस में से सूक्ष्म सेला के निकालने के

ए। ाइ ग्रवमर न पा सा, तत्र उस के शरार के एट जान न माथ हि वह ग्राप भी नष्ट हा जाता है।

(.) जब काइ जब हठात् किसी मका की छत या दीवार के गिर पडने पर उस के नोचे उस के मलब से चारा तरफ से इतना दब या भिच जाय, कि वह ग्रपने शरीर में सूक्ष्म सेला के निकालने और उन्हें उस से अलग एकत्र और संगठित करने के लिए कोई खुली और काफी हवादार जगह न पा सके, तो भी उस का आत्मा उस के शरीर की मृत्यु के साथ हि आप भी मर जाता है।

(ङ) जब किसी जगह बारूद ग्रादि के उडने से किसी जन के शरीर के बहुत से टुकडे होकर वह एक दूसरे से इतनी दूर पर जा पड, कि जहा २ से उस का आत्मा एस प्रत्येक टुकडे से सूक्ष्म सेला के निकालन और उन्हें एक स्थान म एकत्र करने के योग्य न रहे, तब भी उसके शरीर की मृत्यु के साथ उस के आत्मा की भी मृत्यु हो जाती है।

(ग) जब काइ हिंसक पशु किसी मनुष्य को हठात् निगल कर अपने पेट में पहुँचा ले, तब भी वहां पर उस के स्थूल शरीर की मृत्यु के साथ उसके आत्मा की भी मृत्यु हो जाती है।

वस्तुत सूक्ष्म जीवित सेला के बनाने की योग्यता और उन्हें अपने स्थूल शरीर में रख कर भी यदि कोई आत्मा उन्हें अपने स्थूल शरीर से निकालने और उन्हें अपने स्थूल शरीर के

निकट एकत्र करके सूक्ष्म शरीर बनाने के लिए अनुकूल दशा लाभ न कर सके, और ऐसी दशा में उस के स्थूल शरीर की मृत्यु हो जाए, तो वह आप भी अपने स्थूल शरीर की मृत्यु के साथ हि मर जाता है।

(४) जब कोई मनुष्यात्मा नचर के निर्म्माण वा विकासकारी नियम के विरुद्ध और ध्वंस वा विनाशकारी नियम के अनुसार चल कर अपनी निम्माणकारी शक्ति को धीरे २ क्षय करते २ पूर्णतः नष्ट कर देता है, तब भी वह जीवित नहीं रहता और मर जाता है।

प्रश्न। क्या जब किसी मनुष्य का शरीर स्वाभाविक विधि से मरता है, और उसमें सूक्ष्म मल भी वर्तमान होते हैं, तब सब से पहले जो उसके दोनों पांव ठंडे होने लगते हैं, उस का यही कारण है, कि जब आत्मा उन में से अपने लिए सूक्ष्म मेल निकाल चुकने पर उन से अपना सम्बन्ध काट लेता है, तब वह फिर उन में पहले की न्याई कोई ताप उत्पन्न नहीं करता, इसलिए उस के वह पांव एक ओर नए ताप के उत्पन्न न होने से, और दूसरी ओर पहले संचित ताप के क्रमशः घटते जाने से ठण्डे होते चले जाते हैं?

उत्तर। जी हाँ और जब सारे शरीर के सूक्ष्म मलों को निकाल चुकने के बाद वह अपने सारे स्थूल शरीर से हि सम्बन्ध काट लेता है, तब फिर धीरे २ उस का सारा ही शरीर ठण्डा और मुर्दा हो जाता है।

दूसरा परिच्छेद।

प्रश्न। अच्छा, जो लोग अपने २ स्थूल शरीर छोड़कर दूसरा [illegible] धारण करते हैं, वह कहां रहते हैं?

उत्तर। वह यदि अतिशय नीच अर्थात् महा निकृष्ट वा महा अधम आत्मा हों, तो वह सूक्ष्म शरीर धारी बन कर इसी [illegible] के आस पास रहते हैं और यदि उन में कम [illegible], अर्थात् इस प्रकार के बड़े २ पापों से बचे रहे हों, तो वह अपनी २ अपेक्षाकृत श्रेष्ठता के अनुसार परलोक सम्बन्धी किसी श्रेष्ठ स्थान और अपने जैसे श्रेष्ठ लोगों और उन के श्रेष्ठ राज्य और प्रभावों में जाकर वास करते हैं।

प्रश्न। परलोक किसे कहते हैं?

उत्तर। हमारी इस स्थूल पृथ्वी से परे जो इसी की न्याई एक और सूक्ष्म पृथ्वी है, उसे परलोक कहते हैं।

प्रश्न। क्या हमारी इस स्थूल पृथ्वी से भिन्न कोई और सूक्ष्म पृथ्वी भी है?

उत्तर। जी हां। नेचर के परिवर्तन विषयक जिस अटल विधि के अनुसार हमारे स्थूल शरीरों से अनुकूल दशा में सूक्ष्म शरीरों की उत्पत्ति होती है, उसी अटल विधि के अनुसार हमारी स्थूल पृथ्वी से अनुकूल समय में एक सूक्ष्म पृथ्वी की भी उत्पत्ति हुई है उस की उत्पत्ति उन सूक्ष्म शरीर धारी मनुष्यों के निवास के लिए आवश्यक थी, कि जो अधम आत्माओं की अपेक्षा अधिक बढ़िया और फिर एक दूसरे की अपेक्षा भी अधिक बढ़िया सूक्ष्म शरीर निर्म्माण करने के योग्य हुए थे, और अब भी होते हैं।

प्रश्न । तब क्या हमारे स्थूल सूर्य से अलग कोई सूक्ष्म सूर्य भी है जो उस सूक्ष्म पृथ्वी को अपनी ज्योति और अपना ताप देकर उस के निवासियों की सेवा करता होगा ?

उत्तर । बेशक ! हमारे स्थूल सौर जगत् से हि उस के सदृश्य एक और सूक्ष्म सौर जगत् की उत्पत्ति हुई है । सूक्ष्म पृथ्वी उसी सूक्ष्म सौर जगत् का गठन का एक अंग है ।

प्रश्न । क्या हमारी स्थूल पृथ्वी के स्थूल चन्द्र की तरह सूक्ष्म पृथ्वी का भी कोई सूक्ष्म चन्द्र है ?

उत्तर । जी हां हमारे इसी चन्द्र के अनुरूप वहां भी एक सूक्ष्म चन्द्र सूक्ष्म पृथ्वी की परिक्रमा करता है और वह अपने सूक्ष्म सूर्य की ज्योति से ज्योतिमान होकर अपनी ज्योत्सिना से उस पृथ्वी और उस के निवासियों की सेवा करता है ।

तीसरा परिच्छेद ।

प्रश्न । घटिया और बढ़िया दर्जे के सूक्ष्म देहों से क्या प्रयोजन है ?

उत्तर । सूक्ष्म देह कई कोटियों के होते हैं । कुछ अति निम्न कोटि के कुछ उस से अधिक श्रेष्ठ कोटि के, कुछ उस से और अधिक उत्तम कोटि के और कुछ उस से भी और अधिक श्रेष्ठ कोटि के होते हैं । मनुष्यात्मा अपनी अत्यन्त पतित दशा मे अपने स्थूल शरीर के नाते अत्यन्त घटिया दर्जे के सूक्ष्म देह निम्माण करता है और जो आत्मा जितना कम पतित और जहां तक उन्नत दशा मे होते हैं वहां तक वह अपेक्षाकृत बढ़िया कोटि के सूक्ष्म देह निर्म्माण करते हैं । जहां तक और सब मे घटिया कोटि के सूक्ष्म शरीर बनाने वाले अधम आत्मा इसी पृथ्वी पर वा इस के आस पास के स्थानों मे (जिन्हे अधम लोक कहते हैं) रह जाते हैं, और परलोक सम्बन्धी किसी सूक्ष्म लोक मे नहीं पहुंचते —और यही आत्मा भूत प्रेत, चुडल पिशाच आदि नामों से पुकारे जाते हैं —वहां दूसरी ओर वह सब आत्मा जो उन की अपेक्षा जहां तक क्रमागत श्रेष्ठ वा उच्च कोटि के सूक्ष्म शरीरों का निर्म्माण करने के योग्य होते हैं, वह वहां तक अपने २ दर्जे के अनुसार परलोक सम्बन्धी किसी श्रेष्ठ वा उच्च लोक मे पहुंचने और रहने, और वहां पर और उन्नत होने की योग्यता रखने पर उस से भी अधिक उच्च लोकों मे जाने और रहने के अधिकारी बनते हैं ।

प्रश्न । क्या सूक्ष्म अवस्था मे भी हमारी स्थूल पृथ्वी की

स्थान वहां के निवासियों ने अपने रहने के लिए घर बनाए हुए हैं।

उत्तर। उसके वहां के निवासी भी घरों में रहते हैं वहां भी नगर या शहर हैं। जिस प्रकार मनुष्यों ने यहां पर अपने विविध भावों से परिचालित हो कर और उसके द्वारा अपनी मानसिक और शारीरिक शक्तियों को काम में लाकर विविध प्रकार की चीज़ें बनाई हैं अर्थात् मानसिक और शिल्प आदि विविध शिक्षाओं के लिए स्कूल कालेज और यूनीवर्सिटियां और परोपकार विषयक विविध कामों के लिए कई प्रकार की सम्भाएं स्थापन की हैं उसी प्रकार उन मनुष्यों ने सूक्ष्म पृथ्वी में पहुँच कर और वहां भावों से परिचालित होकर अपनी नाना ज़रूरतों के पूरा करने के लिए नाना प्रकार की दुकानें और उनमें से जो जो परोपकारी है उन्होंने परोपकार विषयक कामों के लिए विविध प्रकार की सम्भाएं जारी की हुई हैं। इसी तरह यहां पर भी नाना प्रकार के माल की वस्तुओं के पैदा करने के लिए खेती होना है पहनने के लिए कपड़े बनते हैं और अन्य विविध प्रकार के काम होते हैं।

प्रश्न। क्या यहां की पृथ्वी की कोई सूक्ष्म पृथ्वी में पशु और वृक्ष आदि भी जाते हैं?

उत्तर। निश्चय। इस पृथ्वी के जिन २ पशुओं और वृक्षों की जीवनी शक्तियां अपनी २ स्थूल देह के छोड़ने के अनन्तर अपने २ लिए सूक्ष्म आकार निर्माण करने की योग्यता रखती हैं और जिस २ प्रकार के उच्च कोटि के आकार रखने की योग्यता रखता है उस २ प्रकार के अनुसार वह सूक्ष्म पृथ्वी के जिस विभाग में जाने के योग्य होता है उस में चली जाती है। और जिस प्रकार यहाँ से मनुष्य अपने स्थूल शरीर के त्याग करने पर

है, कि वह केवल यही नहीं, कि अपने स्थूल शरीर में अत्यन्त घटिया दर्जे के हि सूक्ष्म मल बनाते हैं किन्तु वह अपने स्थूल शरीर के जिन अङ्गों के द्वारा दूसरे के प्राणों अस्तित्वों के सम्बन्ध में बहुत बढ़ चढ़ कर हानिकारक बनते हैं, उन अङ्गों के लिए सूक्ष्म मलों के बनाने की योग्यता को ही नष्ट कर लेते हैं। यथा—जो लोग अपनी जीभ के द्वारा दूसरों के सम्बन्ध में झूठी बात रचते वा दूसरों को बांधते रहते हैं, वा किसी और प्रकार से मिथ्या बोल कर दूसरों की हानि करने में लगे रहते हैं उन की जीभ के सम्बन्ध में निर्म्माणकारी शक्ति धीरे धीरे घटती चली जाती है और जब वह सारी चली जाती है, तब वह अपनी जीभ के सम्बन्ध में सूक्ष्म मल कुछ भी नहीं बना सकते। और अपने स्थूल शरीर के त्याग करने पर अपने सूक्ष्म शरीर के लिए जीभ विषयक सूक्ष्म मलों के न मिलने पर वह जो सूक्ष्म शरीर निर्म्माण करते हैं उस में जीभ का अङ्ग बिलकुल नहीं बनता। और यदि जीभ के सम्बन्ध में उन की सूक्ष्म मल निर्म्माणकर शक्ति पूर्णतः न चली गई हो, तो वह अपने स्थूल शरीर के त्याग करने पर जिस सूक्ष्म शरीर को प्राप्त होते हैं, उस में यह जीभ अपूर्ण वा विकृत बनती है। इसी प्रकार जो लोग अपने हाथों के द्वारा जीवों को वध करते रहते हैं वा जीवों के वध का कोई पेशा ग्रहण करते हैं, अथवा पशु जगत् के जीवों को अकारण मारते वा कष्ट देते रहते हैं, अथवा अपने हाथों से चोरी करते रहते हैं वा कोई और बुरा क्रिया करते रहते हैं वह अपने हाथों के सम्बन्ध में सूक्ष्म मलों के बनाने की शक्ति को धीरे २ नष्ट करते रहते हैं, और यदि उन के स्थूल शरीर के छूटने से पहले वह शक्ति पूर्णतः नष्ट हो गई हो, तो फिर वह उस के छूटने के अनन्तर अपने सूक्ष्म शरीर में हाथों से पूर्णतः शून्य बनते हैं। और यदि वह पूर्णतः नष्ट न हो गई हो तो वह बहुत

गधुरे वा निरम्म हाथ निर्माण करते हैं। फिर जो लाग वद चनरी वा व्यभिचार के अभ्यासी बनत हैं, वह अपने जननेन्द्रिय विषयक अंगों के सम्बन्ध में सूक्ष्म मल निर्माण करने की योग्यता का क्षय करते रहते है, यदि वह योग्यता पूर्णत नष्ट हो गई हो, तो वह अपने स्थूल शरीर के त्याग करने पर जब सूक्ष्म शरीर को प्राप्त होते है, तब उन में क्या स्त्री और क्या पुरुष दोनों के शरीर में वह विशेष अंग वर्तमान नहीं होते, और यदि वह योग्यता पूर्णत नष्ट न हो चुकी हो, तो सूक्ष्म शरीर के प्राप्त करने पर वह अंग बहुत अधूरे वा बहुत वा निरम्म बनते है। फिर जो लोग आत्मा के द्वारा नाना जीवित और अजीवित अस्तित्वों पर बुरी दृष्टि डालने के अभ्यासी बन जाते है, वह अपने स्थूल शरीर के छोड़ने पर इस सम्बन्ध मे उस शक्ति के पूर्णत नष्ट हो जाने पर अपने सूक्ष्म शरीर के लिए कोई आखें नहीं बना सकते। और यदि वह शक्ति पूर्णत नष्ट न हुई हो, तो बुरी वा विकृत आखों को प्राप्त होते हैं।

इसी प्रकार जो लोग दूसरों के सम्बन्ध मे अपने मस्तिष्क में नाना प्रकार की बुरी चिन्ताओं के करने के अभ्यासी बन जाते है, वह अपना स्थूल तन के छोड़ने पर अपने सूक्ष्म शरीर में बहुत निरम्म और हानिकारक दिमाग निर्माण करते हैं। नेचर का यह अटल नियम मनुष्य के और अंगों के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार से काम करता है।

प्रश्न। यह तो महा भयानक फल हैं।

उत्तर। बेशक। यदि तुम कुछ देर तक चुप चाप अपने विचार के द्वारा किसी ऐसे पतित आत्मा की तस्वीर को अपने सामने ला सको, कि जिस ने व्यभिचारी बन कर अपने इस पाप सूचक अभ्यास के द्वारा अपने सूक्ष्म शरीर में उस विशेष अंग को

जब अपना पीछा नहीं छुड़ा सकता, और वह उस में किसी तरह बच नहीं सकता।

प्रश्न। क्या नेचर का यह अटल नियम मनुष्य के भिन्न और जीवनधारियों में भी काम करता है?

उत्तर। बेशक! नेचर अपने किसी अटल नियम के पूरा करने में कभी भी किसी अस्तित्व की कोई रियायत नहीं करता। नेचर का यह नियम जैसे मनुष्य जगत् के अस्तित्वों में काम करता है वैसे ही पशु और उद्भिद् जगत् के जीवित अस्तित्वों में भी। क्योंकि पशु जगत् के जो २ जीव और उद्भिद् जगत् के जो २ पौदे वा वृक्ष और अस्तित्वों के सम्बन्ध में जहां तक अधिक अपकारी अर्थात् हानिकारक और अधिक उपकारी वा सदाचारी प्रमाणित होते हैं वहां तक वह अपनी २ इन्हीं क्रियाओं के अनुसार पतित वा श्रेष्ठ बनते हैं और वह अपने २ स्थूल शरीरों के त्याग करने पर या तो कोई सूक्ष्म शरीर निर्म्माण नहीं कर सकते, और इसीलिए उनके बिना पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं, अथवा परलोक में जाने की योग्यता रखने पर अपनी २ अपेक्षाकृत कम वा अधिक शक्ति और कम वा अधिक श्रेष्ठ अवस्था के अनुसार अपेक्षाकृत बुरे वा भले सूक्ष्म शरीरों को प्राप्त होकर उन के अनुसार उस के किसी लोक में प्रवेश करते हैं। जीवित जगतों में औरों की अपेक्षा उद्भिद् जगत् में उपकारी अस्तित्वों की संख्या बहुत अधिक है।

चौथा परिच्छेद ।

प्रश्न । क्या किसी नए सूक्ष्म शरीर के धारण करने के बाद मनुष्य के आत्मा में उस की पहले जैसी ही भली वा बुरी प्रकृति रहती है ?

उत्तर । निस्सन्देह ! उस का शरीर सूक्ष्म सेला के बनने पर अवश्य इतना सूक्ष्म तो हो जाता है कि वह साधारण आंखों में दिखाई नहीं देता परन्तु इस सूक्ष्म शरीर के ग्रहण करने से पहले उस के आत्मा की जैसी कुछ और जहां तक बुरी वा भली प्रकृति वा दशा थी, उस में कोई हठात् अन्तर नहीं आ जाता । इस के भिन्न उस का सूक्ष्म शरीर भी उस के पहले स्थूल शरीर की नाईं अपने भीतर भूख प्यास, नींद, गर्मी, सर्दी, सुख दुःख आदि सब कुछ अनुभव करता है । वह पहले की नाईं स्त्री वा पुरुष का आकार रखता है, वह पहले की नाईं नाना अंग रखता है और नेचर के जिन नियमों के पूरा होने पर उस का पहला स्थूल शरीर जीवित रहता था उन्हीं के पूरा होने पर उस का यह नया सूक्ष्म शरीर भी जीवित रहता और रह सकता है । इसी प्रकार उस का आत्मा भी पहले जिस प्रकार की और जहां तक निम्न वा उच्च कोटि की मानसिक वा भाव शक्तियां रखता था, वही शक्तियां वह उस समय में भी रखता है । वस्तुतः स्थूल शरीर के स्थान में सूक्ष्म शरीर के धारण करने से भिन्न स्थूल शरीर के त्याग करते ही किसी जन में हठात् किसी प्रकार का कोई और परिवर्तन नहीं आ जाता ।

प्रश्न । करोड़ों हिन्दू, आर्य्य समाजी सिक्ख, जैनी और

[illegible] जो यह विश्वास करते हैं, कि मनुष्य अपना स्थूल [illegible] करने पर ईश्वर या विष्णु या यम आदि नामक [illegible] म, अथवा अपने कि[illegible] कर्मों के कारण [illegible] पशु वा वृक्ष आदि का शरीर ग्रहण करके फिर [illegible] पृथ्वी में उत्पन्न होता है, उन का यह विश्वास क्या [illegible]

उत्तर । [illegible], उन का यह विश्वास पूर्णत मिथ्या है। [illegible] अटल नियमानुसार जैसे मुर्गी के अण्डे में कभी मोर या [illegible] नहीं बन सकता, और मनुष्य स्त्री के गर्भाशय [illegible] या पाडे का बच्चा उत्पन्न हो नहीं सकता, और आम के वृक्ष में कभी खरबूजे या तरबूज के फल पैदा हो नहीं सकते, वैसे ही मनुष्य के शरीर में सिवाय मनुष्य के आकार [illegible] वह भी उसी के सदृश आकार के और किसी प्रकार के पशु या वृक्ष आदि का शरीर बन नहीं सकता, क्योंकि ऐसा होना [illegible] के नियम के हि पूर्णत विरुद्ध है।

प्रश्न । ठीक है। परन्तु क्या मनुष्य का आत्मा मनुष्य का [illegible] ही सूक्ष्म शरीर ग्रहण करके किसी और मनुष्य स्त्री के गर्भाशय में प्रवेश नहीं कर सकता ?

उत्तर । कदापि नहीं। किसी स्त्री और पुरुष के परस्पर समागम से जब किसी पुरुष के वीर्य का कोई जीवित सेल किसी स्त्री के अण्डाकार सेल में प्रवेश करता है, तब उन दोनों के सम्मिलन में एक पूर्णत नई सेल और उसके भीतर एक पूर्णत नई और गठन-प्राप्त जीवनी शक्ति बन जाती है, और जब वह गर्भित सेल उस स्त्री के गर्भाशय में विधि पूर्वक स्थापित हो जाती है तब उस नई सेल के अन्तर जो गठन-प्राप्त नई

जीवनी शक्ति बन जाती है, वही अपनी निर्म्माणकारी शक्ति के द्वारा उसके भीतर उस स्त्री के रुधिर से अपने लिए सामग्री लेकर मनुष्य का बच्चा तयार करता है और उस गर्भित सेल में बाहर किसी और मनुष्य का आत्मा अपने किसी सूक्ष्म शरीर के साथ उस में प्रवेश कर के उस बच्चे का निर्म्माण नहीं करता है। इस के भिन्न किसी बच्चे वा जवान वा बूढ़े का पूर्ण "गठन प्राप्त" सूक्ष्म शरीर न तो किसी स्त्री के गर्भाशय में घुस हो सकता है, और न उस में उस के घुसने के लिए नेचर ने कोई रास्ता हि रक्खा है। किसी स्त्री के गर्भाशय में बच्चा बनाने के लिए जिस गठन प्राप्त जीवनी शक्ति की जरूरत होती है वह तो किसी स्त्री और किसी पुरुष के दो जीवित सेलों के सम्मेलन से बनकर उस गर्भाशय में पहले से हि वर्तमान होती है और वही नया जीवित शरीर बनाने की पूर्ण योग्यता भी रखती है। इसीलिए जो लोग यह विश्वास करते हैं कि मनुष्यात्मा अपने स्थूल शरीर के छोड़ने और किसी नए सूक्ष्म शरीर के ग्रहण करने पर वा बिना उस के किसी स्त्री के गर्भ में घुस कर और बन्द रह कर कुछ काल के बाद इस पृथ्वी में फिर शिशु बन कर जन्म लेते हैं, उनका यह विश्वास नेचर के नियम के पूर्णत विरुद्ध और इसीलिए पूर्णत मिथ्या है।

तीसरा अध्याय।

मनुष्य के सम्बन्ध में तीसरा महातत्व

पहला परिच्छेद।

मनुष्य की पतन और विनाशकारी गतियां और उन के कारण।

प्रश्न। श्री देवगुरु भगवान् ने मनुष्य के सम्बन्ध में जो तीसरा महा तत्व लखा और बताया है, वह क्या है ?

उत्तर। वह यह है, कि

मनुष्यात्मा, नेचर की विकासकारी गति के विरुद्ध, अपनी गतियां ग्रहण करके रोगी अथवा पतित बनता है, और पतित होकर पतन के अत्यन्त महा भयानक फलों को भोगने के भिन्न अपनी निर्म्माणकारी शक्ति को क्षय करता है, और यदि वह अपनी इन पतनकारी गतियों और उन के विकारों से मोक्ष लाभ करने के योग्य न बन सके, और उस का पतन बराबर जारी रहे तो वह क्रम २ से अपनी सारी निर्म्माणकारी शक्ति को खो कर उस के नाश के साथ ही आप भी नष्ट हो जाता है।

प्रश्न। मनुष्य की पतनकारी गतियां क्या होती हैं ?

उत्तर । मनुष्य की वह सब मानसिक चिन्ताएं और शारीरिक क्रियाएं कि जो सत्य और हित अथवा नचर के निर्म्माण वा विकासकारी नियम के विरुद्ध हों, पतनकारी गतियां कहलाती हैं।

प्रश्न । किसी मनुष्यात्मा में सत्य और हित के विरुद्ध ऐसी पतनकारी गतियां किन कारणों से उत्पन्न होती हैं ?

उत्तर । दो प्रकार के कारणों से।

प्रश्न । वह कारण कौन से हैं ?

उत्तर । (१) मनुष्यात्मा के सब प्रकार के नीच अनुराग ।
(२)मनुष्यात्मा की सब प्रकार की नीच घृणाएं ।

मनुष्य जगत् में जान बूझ कर असत्य वा मिथ्या मूलक जितने प्रकार के विश्वास वा मत वा वचन वा वेश प्रचलित हुए हैं वा अब होते हैं, अथवा उनके अपने वा पर के सम्बन्ध में अहित वा अपहरण मूलक जितनी क्रियाएं हुई हैं वा अब होती हैं उन के उत्पादक यही दोनों कारण हैं।

प्रश्न । मनुष्यात्मा के नीच अनुराग क्या होते हैं ?

उत्तर । मनुष्यात्मा अपने जिन २ सुखों का लालसा बन कर और उन्हीं को मुख्य रख कर अपने जिन २ सुख-उत्पादक भावों की तृप्ति ढूंढता है, और उन की तृप्ति में क्या अपने आप क्या विश्व के और नाना अस्तित्वों के उचित अधिकार वा उनके सम्बन्ध में अपने आवश्यक कर्त्तव्य कर्म्मों के पूरा करने के विषय में अबोधी, अथवा उदासीन, वा बेपरवाह रह कर अपनी एक वा दूसरे प्रकार की मिथ्या और अपने एक वा दूसरे अन्याय मूलक कर्म्म के द्वारा अपने और उन के लिए विविध प्रकार से अपहरणकारी वा हानिकारक बनता है, उस के ऐसे सुख - भा

इस सब प्रकार के भाव नीच अनुराग कहलाते हैं।

प्रश्न। सुख की लालसा क्या हानी है ?

उत्तर। मनुष्य जब से इस पृथ्वी में जन्म लेता है, तभी से उस में सुख और दुःख का बोध प्रगट हो जाता है, और वह सुख के लिए आकर्षण और दुःख के लिए विकर्षण अनुभव करने लगता है। फिर उमर के बढ़ने के साथ २ उस के भीतर सुख विषयक आकर्षण और दुःख विषयक विकर्षण भाव गाढ़ होते जाते हैं। दृष्टान्त स्थल में —

वह बच्चा होता है ही मुख में दुःखी होने पर अथवा अपनी त्वचा पर सर्दी वा गर्मी वा शरीर के किसी अंग में किसी दर्द के अनुभव होने पर, उस दुःख के सम्बन्ध में अपने रोने चिल्लाने के द्वारा अपने विकर्षण का प्रकाश करता है। फिर किसी ऐसे दुःख के दूर होने पर शान्त हो जाता है। वह अपने मुँह के भीतर किसी वस्तु के जाने पर उस का स्वाद अनुभव करता है—इसलिए सुस्वादु दूध को पी जाता है सुस्वादु चीनी वा शहद खा जाता है, परन्तु विस्वादु वस्तु को मुँह से निकाल देने के लिए यत्न करता है। फिर ज्यों २ उस की उमर बढ़ती जाती है त्यों २ वह नए से नए सुखों का अनुभव करने के योग्य बनकर उन की प्राप्ति का आकांक्षी वा अनुरागी बनता जाता है—चाहे उन सुखों के द्वारा उस का अपनी वा किसी और की कैसी ही हानि क्यों न होती हो। मनुष्य के स्वाद, मैथुन धन सम्पत्ति सन्तान, प्रशंसा, मान, बड़ाई, आराम, आलस्य, नशा, हिंसा कौतुक और कौतूहल आदि विषयक नाना प्रकार के अनुराग नीच अनुराग कहलाते हैं। इस प्रकार के अपने नाना नीच अनुरागों से परिचालित होकर मनुष्य असत्य और अहित-मूलक नाना प्रकार की पतनकारी गतियां ग्रहण करता है, और अपने इन सुख विष

यह विविध नीच अनुरागो के वशीभूत होकर उन की तृप्ति के लिए क्या मनुष्य जगत, क्या पशु जगत् और क्या नेचर के और जगतो के सम्बन्ध मे नाना प्रकार के अन्याय वा अत्याचार वा पाप वा अपराध मूलक कर्म्म करने के लिए मजबूर होता है और विविध प्रकार से मिथ्याचारी बनता है।

प्रश्न। यदि कोई जन धन का अनुरागी होकर उसे निष्पाप रूप से उपार्जन करता रहे, तो उस मे उस की वा किसी और की क्या हानि होती है?

उत्तर। जो मनुष्य धन का अनुरागी बन जाता है, वह अपनी उस अनुरक्ति के कारण धीरे २ उस का ऐसा दास वा गुलाम बन जाता है कि वह फिर अपने उस प्रिय धन को अपने पास से निकाल कर किसी और को उस समय तक देना नही चाहता, जब तक उस को तुलना मे वह किसी और मनुष्य वा पशु वा किसी और वस्तु का अधिक अनुरागी न हो। ऐसा पुरुष २ मनुष्य केवल यही नही, कि अपने उस प्रिय धन को किसी परोपकार विषयक काम वा संस्था के लिए दान और उस मे अपना आत्मिक हित और औरो का कोई कल्याण करके नेचर के विकासकारी नियम को पूरा नही कर सकता, किन्तु अनेक अवसरो पर अपने पारिवारिक जनो के सम्बन्ध मे और इस से भी बढ़ कर अपने शरीर तक की सच्ची और उचित आवश्यकताओं के निवारण करने के लिए भी उसे पूर्ण वा आवश्यक रूप से खर्च करना नही चाहता। उस के लिए उस धन विषयक नीच अनुराग के कारण नेचर के विकासकारी शुभ नियम के विरुद्ध [illegible] अपने आत्मा के भिन्न २ दशाओं

मे अपने पारिवारिक नरा वा अपने हि शरीर की भी हानि करके पतित होना अनिवार्य है। इस के भिन्न ज्यो २ उस की को अन्य नीच अनुराग भी उस पर अधिकार लाभ करके उसे अपना दास बनाता जाता है, त्यो २ वह अपने आत्मिक बल को खोकर एक वा उन के दासत्व में मोक्ष चाहने वा मोक्ष पाने और लगा और अपने भीतर किसी जीवन दायक उच्च अनुराग वा भाव के विकसित करने के अयोग्य होता जाता है। इस नियम के अनुसार प्रत्येक मनुष्य के लिए अपने नीच अनुरागों के द्वारा नीच वा पतित बनना लाजमी है।

प्रश्न। क्या सुख अनुरागी प्रत्येक मनुष्य के लिए पतित होना आवश्यक है?

उत्तर। बेशक। यदि नेचर में कोई ऐसा नियम होता कि जिस किसी मनुष्य को जब और जो २ कुछ सुख अनुभव होता, उस के चाहने और प्राप्त करने से उस का और उस के द्वारा अन्य अस्तित्वों का सदा शुभ ही होता, और उसका वा औरों का कभी अशुभ न होता, तब तो किसी भी मनुष्य के सुखार्थी वा सुख अनुरागी बनने पर कोई आपत्ति नहीं हो सकती थी। परन्तु केवल यही नहीं कि नेचर में ऐसा कोई नियम नहीं है, किन्तु उस के विरुद्ध उस में यह अटल नियम वर्तमान है कि सुखार्थी वा सुख अनुरागी होकर प्रत्येक मनुष्य क्या अपने और क्या नेचर के अन्य जगतों के नाना अस्तित्वों के सम्बन्ध में अशुभ वा हानि की अवश्य उत्पत्ति करता है, और सुख अनुरागी होने पर मनुष्य के लिए क्या अपनी और क्या अन्य अस्तित्वों की विविध प्रकार से हानि करना अनिवार्य है अनिवार्य है इसीलिए सुखार्थी लोगों और

करोड़ों मनुष्य क्या अपने और क्या अन्य जनों और क्या अन्य जीवित और अजीवित अस्तित्वों के सम्बन्ध में विविध प्रकार से हानिकारक बने हुए हैं और अपनी हानिकारक क्रियाओं के द्वारा क्या अपने और क्या अन्य मनुष्यों और क्या पशु जगत् के लाखों जीवों के सुख और आराम और इस से भी बढ़कर उन के प्राणों तक का अपहरण करते रहते हैं।

प्रश्न। अच्छा, यदि कोई मनुष्य अपने सब पारिवारिक सम्बन्धियों और अपनी सब प्रकार की सम्पत्ति का त्याग कर अकेला किसी रमणीय स्थान में जा बैठे और भिक्षा करके अपने शरीर का पालन कर लिया करे और संसार के प्रत्येक काम काज से विरत होकर ध्यान योग या किसी पुस्तक के पाठ या विचार या किसी जप या एक या दूसरे प्रकार के भजन या स्तोत्र आदि के गान के द्वारा सुख शान्ति के साथ अपना समय बिताने की चेष्टा करे, तो क्या ऐसा करने से उस के आत्मा को कोई हानि पहुँच सकती है ?

उत्तर। बहुत बड़ी हानि। वह ऐसी दशा में चाहे मनुष्य जगत् के सम्बन्ध में चोरी, ठगी, धोखेबाज़ी, व्यभिचार, अप्राकृतिक कर्म्म आदि आठ २ पापों से बचे रहने की योग्यता भी रखता हो, और किसी नशेदार चीज के सेवन का अभ्यासी भी न हो तो भी वह अपने सुख का मुख्य अनुरागी और इसीलिए स्वार्थ परायण बनकर नेचर के विकासकारी नियम के अवश्य विरुद्ध चलता है, और ऐसा करके वह अपनी जीवनी शक्ति के बल को (जो औरों के सम्बन्ध में हितार्थी बनने और नीच अनुराग मूलक सुखों और उन के भिन्न तन, मन और धन आदि को अर्पण करके उन का सच्चा हित साधन करने से ही उन्नत हो सकती

) अवश्य क्षय करता है। इस के भिन्न शिक्षा के द्वारा किसी के
को अपने शरीर के पालन और पोषण करने का उस समय तक
का अधिकार रहा है, जब तक वह अपने शरीर के द्वारा उचित
ना काज वा परिश्रम करके आवश्यक रूप मे अपने आप धन
कमा सकता हो, और न किसी को यही अधिकार है कि वह अपने
सुख के लिए अपनी पत्नी या अपने जिन अन्य आश्रित जनों की
रक्षा और पालना के लिए जाम्य हो, ऐसे साध्यता-मूलक अपने
नाना कर्तव्य कर्मों को त्याग दे। ऐसा करना बहुत बड़ा पाप
है, कि जिस के पतनकारी फलो से वह बच नहीं सकता।
इस के भिन्न परिवार आदि के छोड़ने से पहले उन से जितने अन्य
प्रकार के पाप कर्म किए हो, उन का जब तक उस में बोध
उत्पन्न न हो, और उन के सम्बन्ध में समुचित परिशोध करके
जहां तक उन से उस के आत्मा की शुद्धि सम्भव है, उन से उस
की शुद्धि न हो, तब तक उन के पतनकारी प्रभावों से भी
उस का उद्धार नहीं हो सकता। वस्तुतः सुख अनुरागी वा सुख
परायण होकर कोई मनुष्य भी उन के विविध प्रकार के पतन-
कारी फलो से बच नहीं सकता।

प्रश्न। मनुष्यात्मा के दूसरे पतनकारी कारण अर्थात् नीच
घृणाओं से क्या तात्पर्य है?

उत्तर। जब कोई मनुष्य किसी मनुष्य या अन्य जीवित
और अजीवित अस्तित्व के प्रति अपने भीतर कोई ऐसा घृणा भाव
अनुभव करता है, कि जिस से परिचालित होकर वह उस के वा
उस के किसी सम्बन्धी के प्रति किसी अन्याय-मूलक वा मिथ्या
विश्वास वा चिन्ता के पोषण वा किसी मिथ्या वा अन्याय मूलक
कर्म के करने का इच्छुक बन जाता है, और इस प्रकार की बुरा

चिन्ता वा ऐसे बुरे कर्म्म के करने, अथवा कराने में तृप्ति ढूढता और पाता है, तब उसके ऐसे सब प्रकार के घृणा भाव नीच घृणाएं कहलाते हैं।

प्रश्न। मनुष्य के आत्मा में इन नीच घृणा भावों की उत्पत्ति किस तरह होती है?

उत्तर। चार प्रकार से। यथा —

(१) किसी से अपनी कामना की तृप्ति न पाने पर—जब कोई मनुष्य अपनी किसी सुख दायक कामना में (चाहे वह उस के वा किसी और के लिए कैसी ही अनुचित और हानिकारक क्यों न हो) किसी और को साथी बनाना चाहता है, और वह उस का साथी नहीं बनना चाहता, और उस में उस का साथ नहीं देता, वा उस की किसी उचित कामना को भी किसी कारण से पूरा नहीं कर सकता वा नहीं करता, तब वह अपने इस सुख विषयक नीच अनुराग के नशे में पागल और अपने हित से अबोधी होने के कारण उस के ऐसा करने से अपने हृदय में जो आघात् पाता और दुखी होता है उस से अपने किसी ऐसे दुःख दाता के प्रति अपने भीतर नीच घृणा अनुभव करता है।

(२) अपने प्रति वा किसी अन्य जन वा जन समूह के साथ नीच अनुराग रखने पर—जब कोई मनुष्य अपने अस्तित्व वा अपने किसी पारिवारिक सम्बन्धी वा अपने सम्प्रदाय वा अपनी जाति वा अपने देश वासियों के साथ नीच अनुराग से बंध जाता है, तब वह स्वभावतः अपना और उन का पक्षपाती बन जाता है, और इसीलिए क्या उस के और क्या उन में से किसी के सम्बन्ध में यदि कोई जन किसी सत्य

दाव या अपराध या पाप या किसी ताकत या हीनता को प्रगट कर या वह उस अपने पर अनुराग और भय उन के नीच अनुराग के वश होने के कारण उस की उसी क्रिया से अपने हृदय में आघात और कष्ट पाता है, और स्वाभाविक किसी उस जन के प्रति अपने भीतर नीच घृणा अनुभव करता है।

(३) अहं अनुराग के बहुत बढ़ जाने पर—जब कोई मनुष्य उस दशा में पहुंच जाता है, कि वह अपनी बड़ाई की तुलना में किसी विषय में भी किसी और जन की बड़ाई को (चाहे वह पूरगत सच्ची भी हो) सुनना या देखना या मानना पसंद नहीं करता और उस से दुखी होता है तब वह उस के प्रति स्वभावतः नीच घृणा अनुभव करता है।

(४) अपने एक या दूसरे प्रकार के मिथ्या संस्कारों या मिथ्या विश्वासों का अनुरक्त बन जाने पर—जब कोई मनुष्य अपने मिथ्या संस्कारों या मिथ्या विश्वासों का अनुरागी होकर उन का पक्षपाती बन जाता है, तब वह (१) किसी और मनुष्य वा मनुष्य समूह को अपने किसी धर्म मत या विश्वास के अनुसार न पाकर उस से घृणा करता है। (२) किसी जन की किसी पोशाक या चाल ढाल या रहन सहन या बोली आदि को अपनी जैसी न देखकर उस से घृणा करता है। (३) किसी जन को अपनी अपेक्षा किसी विषय में हीन देख कर घृणा करता है। (४) किसी जन को उस के किसी व्यवसाय वा रंग वा सम्प्रदाय वा जाति भेद आदि के कारण घृणा करता है।

इस प्रकार की सब घृणाएं नीच घृणाएं कहलाती हैं, और वह मनुष्यात्मा के लिए उस के नीच अनुरागों की तरह अत्यन्त

पतनकारी प्रमाणित होती हैं ।

प्रश्न । किसी मनुष्य में नीच घृणा भावों की वर्तमानता किन बातों वा लक्षणों से पहचानी जा सकती है ?

उत्तर । जब कोई मनुष्य यह चाहता है कि

(१) मैं किसी हीनता वा नीचता वा त्रुटि के लिये किसी और के द्वारा हीन वा नीच वा घटिया न समझा जाऊं और न कहलाऊं और न माना जाऊं और न विश्वास किया जाऊं ।

(२) मुझ से कोई जन श्रेष्ठ वा बढ़िया न समझा न माना, और न प्रगट किया जाय, और मुझ से बढ़ कर किसी का मान प्रतिष्ठा न हो वा उसे कोई सन्मान आदि न मिले ।

(३) मेरी हर एक कामना वा रुचि को, चाहे वह किसी और के निकट कैसी ही बुरा वा अनुचित भी हो प्रत्येक जन अवश्य पूरी करे ।

(४) मेरे किसी धर्म्म विषयक विश्वास के विरुद्ध, चाहे वह किसी और के विचार में मिथ्या भी हो, और मेरे किसी मत के विरुद्ध चाहे वह किसी और के विचार में ठीक न भी हो कोई जन कोई मत न रक्खे, और मेरी रुचि के विरुद्ध कोई जन अपनी किसी राय वा अपने किसी मत का प्रचार न करे,

तब उसके यह सब लक्षण उस के आत्मा में नीच घृणा भावों की वर्तमानता का प्रमाण देते हैं ।

यही उपरोक्त नाना प्रकार के नीच अनुराग और नाना प्रकार की नीच घृणाएं यह पतनकारी कारण हैं कि जो मनुष्य आत्माओं को असत्य और अहित की ओर ले जाकर उन्हें पतित और तबाह करते हैं । यही वह पतनकारी कारण है कि जिन्हों ने मनुष्य जगत् में बहुत कुछ अनुचित रोगों और कष्टों और दुखों और शोकों की उत्पत्ति कर रक्खी है । इन्हीं पतनकारी कारणों से पशु

दूसरा परिच्छेद ।

मिथ्या और मिथ्याचार ।

प्रश्न । आप ने यह सत्य प्रगट किया है कि मनुष्य जगत् की सब श्रेणियों में जितने प्रकार के मिथ्या विश्वास और जितने प्रकार के मिथ्याचार और जितने प्रकार के अग्नि वा अपहरण मूलक अन्य कर्म पाए जाते हैं उन सब की उत्पत्ति के कारण उस के नाना प्रकार के नीच अनुराग और उस की नाना प्रकार की नीच घृणाएं हैं। इन में से पिछली बात तो बहुत कुछ समझ में आ गई है परन्तु पहली बात अर्थात् मिथ्या और मिथ्याचार के विषय में यदि आप कुछ और अधिक खोल कर शिक्षा दें तो बड़ी कृपा हो।

उत्तर । अच्छी बात सुनो। जब कोई मनुष्य अपने किसी नीच अनुराग अथवा अपने किसी नीच घृणा विषयक भाव की तृप्ति में किसी प्रकार की मिथ्या को एक ओर अपना सहायक रखना वा अनुभव करता है, और दूसरी ओर उस मिथ्या से उस के आत्मा को जो हानि होती है उस के विषय में अपने हृदय में कोई घृणा वा दुख उत्पादक किसी प्रकार का कोई सच्चा और प्रबल क्रोध नहीं रखता, तब वह स्वभावतः एक वा दूसरे प्रकार की मिथ्या का साथी बनने और उस का व्यवहार करने के लिए तय्यार हो जाता है, और इस प्रकार जान बूझ कर भी सत्य को छोड़ कर मिथ्या का पथ ग्रहण करता है। फिर वह मिथ्या का अपनी विविध

अभिप्रायों में सहायक पाने पर [illegible] प्रेमक भी बन जाता है। इस के सिवा [illegible] कहलाने वाले धर्म वा [illegible] की शिक्षा के नाम से भी बाल्यकाल से ही नाना प्रकार के मिथ्या विश्वासों और मिथ्या धर्म साधनों का अभ्यासी हो जाता है [illegible] यह इस अभ्यास के कारण भी मिथ्या प्रिय बन जाता है। इस के सिवाय अपनी नीच प्रकृति के कारण वह इस [illegible] समाज में अपने बाप की ओर [illegible] और [illegible] भी [illegible] विविध प्रकार के मिथ्या विश्वास ग्रहण और धारण करने के लिए तय्यार करता है, और उन के अतिरिक्त [illegible] कई प्रकार का मिथ्या का व्यवहार [illegible] करता है। फिर जब वह मिथ्या के द्वारा अपने किसी अभिप्राय में सफलता लाभ करने पर तुष्टि वा तृप्ति वा खुशी पाता है तब वह कितनी ही अवस्थाओं में मिथ्या की आवश्यकता और उस के व्यवहार की विधि का अपने पारिवारिक और अन्य जनों को भी उपदेश देता है और मिथ्या की महिमा का अपने प्रेम के अनुसार बहुत उत्साह और अभिमान के साथ वर्णन करता है। वस्तुतः प्रकृति के नियमानुसार प्रत्येक नीच अनुरागी और नीच घृणाकारी मनुष्यात्मा के लिए मिथ्याचारी होना आवश्यक है। इसलिए औरों के भिन्न कहलाने वाले नाना धर्म सम्प्रदायों के संस्थापकों और उन के कहलाने वाले नाना उपास्य देवताओं ने भी जैसे अपने एक वा दूसरे अभिप्राय के लिए मिथ्या को पहले काल में अपना सहायक बनाया था, वैसे ही मनुष्य समाज में कितने ही नेता जन अब भी एक वा दूसरे अभिप्राय के लिए यथावश्यक मिथ्या का आश्रय लेते

ग्रौर उस का प्रचार करते हैं ।

प्रश्न । यह तो बड़ी भयानक दशा है ।

उत्तर । बेशक । परन्तु मिथ्या के द्वारा मनुष्य की जो आत्मिक हानि होती है उस के विषय में यदि उस में कोई सच्चा ग्रौर यथेष्ट बोध वर्तमान न हो तब वह ऐसी दशा में चाहे महात्मा, मुनि, ऋषि वा महर्षि, गुरु पैगम्बर, नबी, नेता वा इस से भी बढ़ कर कोई देवी वा देवता वा अवतार आदि भी कहलाता हो तो भी वह किसी ऐसे मिथ्याचार से विरत नहीं रह सकता, ग्रौर अपने आत्मा को उस के महा हानिकारक फलों से नहीं बचा सकता ।

प्रश्न । भला मनुष्य जगत् में उस के नीच अनुरागों ग्रौर उस की नीच घृणाग्रों के कारण कितने प्रकार की मिथ्या प्रचलित है ?

उत्तर । कम से कम बीस प्रकार की ।

प्रश्न । कौन २ सी ?

उत्तर । वह यह हैं —

(१) जब कोई मनुष्य धन विषयक अनुराग वा लालच के वशीभूत होकर किसी की कोई वस्तु वा सम्पत्ति के दबा लेने वा अपने किसी व्यवसाय में ठगी के द्वारा धन वा सम्पत्ति लाभ करने, वा किसी प्रकार की प्रवञ्चना के द्वारा अपने किसी पारिवारिक वा किसी ग्रौर सम्बन्धी वा अन्य जन से धन वा कोई वस्तु ले लेने, वा किसी को प्रवञ्चित करके कोई राज्य वा पद वा प्रभुत्व वा अधिकार लाभ करने, वा किसी भले काम के लिए सामर्थ्य रखने पर अपनी ओर से धन

विषयक सहाय की कोई उचित प्रतिज्ञा करके उस पूरण न करने, वा जहां तक सम्भव हो कम से कम करने के निमित्त सत्य के विरुद्ध कोई बात कहता वा बहाना बनाता वा कोई लेख लिखता वा कोई आपत्ति खड़ी करता है।

(२) जब कोई मनुष्य जान बूझ कर अपने वा किसी और के किसी दोष वा अपराध वा पाप वा अपना वा किसी और की किसी नीचता वा हीनता के छिपाने के लिए सत्य के विरुद्ध कोई बात कहता वा बताता वा लिखता वा किसी और विधि से उस का व्यवहार करता है।

(३) जब कोई मनुष्य अपने द्वेष वा ईर्षा भाव की तृप्ति के लिए जान बूझ कर किसी जन पर सत्य के विरुद्ध कोई कलङ्क वा अपवाद आरोपण करके वा कराके उसे किसी से कोई दण्ड वा कष्ट दिलवाने की चेष्टा करता है।

(४) जब कोई मनुष्य जान बूझ कर किसी से कोई ऐसा प्रतिज्ञा वा कोई ऐसा अगीकार करता है, कि जिसे वह पूरा करने की पहले से ही अपने भीतर कोई इच्छा नहीं रखता, अथवा किसी विषय में कोई उचित प्रतिज्ञा वा अगीकार करके और उसे पूरण करने की सामर्थ्य रखकर भी उस के सम्बन्ध में कोई अनुचित कारण बता कर उसे भग करता है।

(५) जब कोई मनुष्य जान बूझ कर सत्य के विरुद्ध किसी प्रकार का कोई डरावा वा कोई लालच देकर किसी को उस की किसी उचित वा अनुचित क्रिया से रोकने वा कोई काम्य कराने की चेष्टा करता है।

(६) जब कोई मनुष्य किसी कुसंस्कार के वशीभूत होकर किसी मनुष्य वा समाज वा सम्प्रदाय वा जाति के सम्बन्ध में जान बूझ कर सत्य के विरुद्ध किसी बात का प्रचार करता है।

(७) जब कोई मनुष्य किसी घटना के सम्बन्ध में उचित राज विधि वा सुनीति के द्वारा बाध्य होने पर भी किसी बात के बताने वा प्रचार करने में सत्य के विरुद्ध कोई बात कहता वा प्रगट करता है।

(८) जब कोई मनुष्य किसी मनुष्य वा पशु को डराकर कुछ लाभ करने के लिए सत्य के विरुद्ध कोई बात कहता वा कोई वेश धारण करता है।

(९) जब कोई मनुष्य अपने वा किसी और के शरीर अथवा अपनी वा किसी और की किसी सम्पत्ति पर किसी की ओर से अनुचित आक्रमण के होने पर किसी उचित विधि के ग्रहण करने के स्थान में जान बूझ कर सत्य के विरुद्ध कोई बात बनाकर और कहकर अपना वा उस की रक्षा करने के लिए कोई यत्न करता है।

(१०) जब कोई मनुष्य अपने शारीरिक आराम वा आलस्य वा अपनी काम प्रवृत्ति वा अपने जिह्वा विषयक

स्वाद वा किसी अन्य सुख दायक अनुराग के वशीभूत होकर अपने किसी कर्त्तव्य कर्म्म को पूरा करना वा अपनी किसी ऐसी शुभ प्रतिज्ञा पर आरूढ़ रहना नहीं चाहता, कि जिस के पूरा करने वा उस पर आरूढ़ रहने के लिए वह बाध्य हो, और उस में अपने बचाव के निमित्त सत्य के विरुद्ध जान बूझ कर कोई बात कहता वा लिखता वा किसी और विधि से उस का व्यवहार करता है।

(११) जब कोई मनुष्य किसी जन के साथ अपने किसी सम्बन्ध वा उस के किसी पद वा उस की किसी सेवा वा उस के विषय में किसी की सिफारिश वा किसी और बात का लिहाज़ करके उसके विषय में जान बूझ कर सत्य के विरुद्ध कोई बात कहता, लिखता वा प्रगट करता है।

(१२) जब कोई मनुष्य अपनी वा किसी और की किसी प्रकार की प्रशंसा वा बड़ाई वा महिमा के प्रचार के लिए सत्य के विरुद्ध जान बूझ कर कोई बात कहता वा लिखता वा किसी और विधि से उस का व्यवहार करता है।

(१३) जब कोई मनुष्य अपने हृदय में दीन भाव (इनकसारी) की वर्तमानता को दिखाने और ऐसा करके किसी से बड़ाई पाने के लिए अपने भीतर किसी सद्गुण के वर्तमान होने पर भी जान बूझ कर उन की वर्तमानता को नहीं मानता वा उस से

भी बढ़कर जान बूझ कर सत्य के विरुद्ध अपने में किसी दोष या हीनता का होना बताना या प्रगट करता है।

(१४) जब कोई मनुष्य किसी को कोई कष्ट पहुंचा कर आप हुए लाभ करने वा किसी और को हर्षित करने के लिए जान बूझ कर सत्य के विरुद्ध उसे कोई दुख-उत्पादक बात कहता वा उस तक कोई ऐसी खबर पहुंचाता है।

(१५) जब कोई मनुष्य किसी दल वा जत्थे के बनाने वा किसी सम्प्रदाय वा समाज वा सोसायटी के स्थापन वा संगठन वा उस की वृद्धि करने वा लोगों को अपना वा किसी और का अनुगत बना कर अपनी किसी कामना के पूरा करने के लिए जान बूझ कर सत्य के विरुद्ध किसी बात का प्रचार करता वा करवाता है।

(१६) जब कोई मनुष्य अपने वा किसी और के सम्बन्ध में लोगों के हृदयों में श्रद्धा वा सन्मान वा विश्वास भाव की उत्पत्ति करने के लिए जान बूझ कर सत्य के विरुद्ध एक वा दूसरे प्रकार की "करामातों" का प्रचार करता है।

(१७) जब कोई मनुष्य अपनी वा किसी और की किसी पुस्तक के किसी वचन वा वर्णन वा अपने वा किसी और के किसी वचन वा लेख वा राज विधि वा राज आज्ञा वा नगर के किसी नियम आदि का अपनी

किसी व्याख्या या अपने किसी भाष्य या किसी और प्रकार से जान बूझ कर सत्य के विरुद्ध बनाता या प्रगट करता है।

(१८) जब कोई मनुष्य आप घड़ कर या किसी और से घड़वा कर वा किसी और के द्वारा रचित जान कर एक किसी वचन या वाक्य या किसी ऐसी लिखा या पुस्तक को सत्य के विरुद्ध उसी किसी देवता या देवी या ईश्वर या गाड या अल्ला या मूसा आदि के नाम से या इन में से किसी की ओर से बनाया या दिया हुआ कह कर उनका प्रचार करता है।

(१९) जब कोई मनुष्य अपने किसी धर्म मत या सम्प्रदाय या पथ या अपनी किसी सभा या समाज या बिरादरी या अपनी जाति या अपने देश का नीच अनुरागी होकर और इस नीच अनुराग के कारण उस का पक्षपाती बन कर अपने धर्म मत या अपने सम्प्रदाय या पथ या दल या अपनी किसी सभा या समाज या जाति से बाहर के लोगों को हीन या बुरा प्रगट करने के लिए जान बूझ कर सत्य के विरुद्ध कोई बात कहता या लिखता या उस का प्रचार करता है।

(२०) जब कोई मनुष्य नेचर की किसी वस्तु को (जिस में उसका अस्तित्व भी शामिल है) जान बूझ कर कर सत्य के विरुद्ध अपनी वस्तु समझता है, और ऐसी प्रत्येक वस्तु को जिस पर उसे उचित अधिकार प्राप्त हो, नेचर के निर्माण या विकास विषयक

कार्य के लिए पूर्ण रूप से अर्पण वा प्रयोग करने के स्थान में उस के विरुद्ध किसी और अभिप्राय के लिए काम में लाना वा लाना चाहना है

तब यह अपना ऐसा प्रत्येक क्रिया के द्वारा मिथ्याचारी बनता है।

इस प्रकार का मिथ्याचार प्रत्येक जाति वा देश के मनुष्यों में बहुत प्रबल रूप से फैला हुआ है और प्रत्येक देश वा जाति के लाखों वा करोड़ों लोग केवल यही नहीं, कि अपने आप में कि अपने हृदय के विविध नीच भावों में परिचालित होकर नाना प्रकार से मिथ्याचारी बनते हैं किन्तु उन्हें धर्म के नाम से भी विविध प्रकार के मिथ्या विश्वासों, और समाज और सम्प्रदाय और जाति और देश की उन्नति के नाम से भी कई प्रकार के मिथ्याचारों की शिक्षा दी जाती है, और इन मिथ्याचारों से उनके अपने वा किसी और के आत्मा का जिस २ प्रकार का भयानक पतन होता है इसका उन में कोई बोध पाया नहीं जाता।

प्रश्न। करोड़ों मनुष्यों को आत्म बोध से हीन नाना प्रकार के मिथ्या विश्वासों की शिक्षा किस प्रकार से मिलती है?

उत्तर। जब कोई मनुष्य इस पृथ्वी में पहले पहल जन्म लेता है, तब उस में जहां एक ओर उस की विवेचना वा विचार शक्ति पूर्णतः अविकास की दशा में होती है, वहां दूसरी ओर इस की धारणा—शक्ति जन्म काल से ही ऐसी दशा में होती है कि उस पर उस की माता और उस के बाप आदि विविध ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा उस के चौतरफा सामानों के जो २ सत्य वा मिथ्या ज्ञान–उत्पादक प्रभाव उस तक पहुंचते हैं, उन्हें वह विवश ग्रहण करता रहता है। फिर जब वह कोई

अपना ज्ञान ज्यों ज्यों अपने पास वाले जनों की बुद्धि और बोल समझने लगता है तब वह उन की शिक्षा में कई प्रकार की बातों पर (चाहे वह सत्य हो और चाहे मिथ्या) विश्वास करना आरम्भ करता है। फिर उस में ज्यों २ कल्पना शक्ति बढ़ती जाती है और आश्चर्य और कौतूहल प्रियता का भाव उत्पन्न और प्रबल होता है त्यों त्यों जिन २ के प्रति विश्वास स्थापित होता जाता है उन २ की नाना प्रकार की आश्चर्य और कौतूहल उत्पादक बातों पर चाहे वह कैसी ही मिथ्या भी हों, एक ओर उन के मिथ्यापन के जानने के लिए जितने ज्ञान बुद्धि और तर्क की शक्ति और सत्य असत्य के विषय में सत्य अवगति का ज्ञान को आवश्यकता है उस की कमी में, और दूसरी ओर कल्पना शक्ति के अधिकार और उन बातों के द्वारा अपने उन भावों की तृप्ति में रूप वा सुख वा तृप्ति के मिलने से उन पर स्वभावतः विश्वास करता जाता है। इस प्रकार का युक्त विश्वास संस्कार प्राप्त को अन्ध विश्वास कहलाता है।

ऐसी दशा में आत्मा तो कहीं रहा, जिस के सम्बन्ध में वह पूर्णतः अन्धकार की अवस्था में होता है यदि उस के स्थूल शरीर वा जगत की किसी साधारण घटना के सम्बन्ध में भी उस केवल मिथ्या बातें बताई जावें तो भी वह उन्हें बिना सत्य समझे कर विश्वास कर लेता है। यथा —

यदि किसी जन को बाल्य काल से यह शिक्षा दी जाए, कि जिन बच्चों को चेचक की बीमारी होती है, वह सीतला नामक एक देवी के कोप से होती है, तो वह इस बात को सत्य मान कर उस पर विश्वास कर लेगा। यदि उसे कहा जाय, कि मनुष्यों के शरीर में और जिस २ प्रकार की बीमारियां होती हैं,

वह उस के मरे हुए पूर्वजों में से एक वा दूसरा पूर्वज उत्पन्न करता है, तो वह उस पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उसे बताया जाय, कि उस के अपने मरे हुए पूर्वजों के भिन्न और मरे हुए स्त्री पुरुष भी इन बीमारियों का उत्पन्न करने हैं तो वह इस बात को भी सच मान कर विश्वास कर लेगा। यदि उसे यह शिक्षा दी जाय, कि अमुक नाम की जिस स्त्री की मूर्ति अमुक मठ वा अमुक मन्दिर में है, उस के खाने के लिए यदि उसे कोई अमुक किसी सुवर वा मुर्गी के बच्चे की बलि वा उसे अमुक अमुक मीठी चीज़ दी जाय और उसके सूंघने के लिए कुछ सुगन्ध दायक फूल अर्पण किए जाएं, वा सुगन्ध-उत्पादक धूप वा कोई और वस्तु आग में जलाई जाय, तो वह खुश होकर किसी बीमार की बीमारी को दूर कर देती है वा जिस स्त्री के कोई पुत्र न होता हो, उसे पुत्र दे देती है तो वह इस बात को भी ठीक मानकर उस पर विश्वास कर लेगा। यदि उसे सिखाया जाय कि अमुक देवी वा देवता की जो मूर्ति अमुक स्थान में है उसे स्नान कराने उस पर फूल चढ़ाने और उसे धूप आदि की सुगन्ध देने और अमुक २ वस्तु आहार के लिए आगे धरने से मनुष्य की अमुक २ कामना पूरी हो जाती है, तो वह उसे सत्य मान कर उस पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उसे बताया जाय, कि जिस जन को बुखार होता हो, उस के गले वा दाहने बाज़ू पर यदि अमुक जन से एक मंत्र वा नक्श लिखवा कर बांधा जाय तो उसका बुखार दूर हो जाता है, तो वह इस बात पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उसे बताया जाय, कि किसी बीमार पर अमुक जन यदि कोई "मंत्र" पढ़कर फूंक मार दे तो उस की बीमारी चली जाती है, तो वह इस बात पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उसे बताया जाय

ग्रामीण को कोई गौ या भैंस दूध नहीं देती, तब उसका कारण किसी मरे हुए पूर्वज का कोप होना है, और यदि ... को अमुक २ वस्तु दी जाय, तो वह खुश होकर उस गौ ... अपना कोप हटा लेता है, और वह गौ या भैंस फिर दूध ... लगती है, तो वह इस बात पर भी विश्वास कर लेगा। यदि ... यह बताया जाय, कि ईश्वर नामक एक देवता है कि जो सब मनुष्यों और पशुओं और वृक्षों के आकारों को बनाता है और उसी ने सूर्य चन्द्र और पृथ्वी को बनाया है, और वही उन्हें चला रहा है तो वह इन बातों को ठीक मान कर उन पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उसे यह बताया जाय, कि यह ईश्वर नामक देवता जब मनुष्यों से नाराज हो जाता है, तब उन से अपना बदला लेने और उन्हें डराने के लिए प्लेग आदि की बीमारियां और दुर्भिक्ष आदि की विपत्तियां भेज कर उन्हें विविध प्रकार से दुख और कष्ट पहुंचाता है तो वह इस बात पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उसे बताया जाय, कि ईश्वर नामक देवता अमुक २ समय में पृथ्वी में अमुक २ मनुष्य या कछुवे या सुवर आदि का रूप धारण कर आया था, तो वह इस बात को भी मान लेगा। यदि उसे यह सिखाया जाय, कि ईश्वर नामक देवता कभी भी मनुष्य या सुवर आदि नहीं बना और नहीं बन सकता, तो इस बात पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उसे यह सिखाया जाय, कि ईश्वर नामक देवता ने अपने अमुक पैगम्बर के द्वारा जो २ शिक्षा दी है, उस में उस ने मनुष्य के लिए पशुओं को वध करके उन का मांस खाना आवश्यक और उचित बताया है, तो वह इस बात पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उसे यह बताया जाय, कि ईश्वर नामक देवता ने मनुष्य को मांस खाने को कभी

गाज्ञा नहीं दी, और उस ने इस कर्म को बुरा बताया है और वह किसी जन की ऐसी क्रिया से खुश नहीं किन्तु नाराज़ होता है, तो वह इस बात पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उस यह बताया जाय कि ईश्वर नामक देवता ने पुरुष को अपनी एक पत्नी के जीते जी दूसरी और दो के जीते जी तीसरी और तीसरी के वर्तमान होने पर चौथी स्त्री के साथ विवाह करने की आज्ञा दी है परन्तु किसी एक पति के जीते जी उस ने किसी स्त्री को दूसरे पुरुष से विवाह करने की अनुमति नहीं दी तो वह इन बातों को सत्य मान कर उन पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उसे यह बताया जाय कि ईश्वर नामक देवता ने किसी पुरुष को अपनी एक पत्नी के जीते जी दूसरा विवाह करने की आज्ञा नहीं दी और वह पुनर्विवाह करने वालों को बुरा और पापी समझता है तो वह इन बातों को भी सत्य मान कर उन पर विश्वास कर लेगा। यदि उसे बताया जाय, कि अमुक नाम के मन्त्र का जप या अमुक विधि से दिन में इतने बार ईश्वर नामक देवता की स्तुति करने से वह बहुत प्रसन्न होता है, और उस पर इस पृथ्वी में कई प्रकार की मेहरबानियां करने के सिवा उस के मरने पर उस किसी विशेष स्थान के अनन्तर एक खास जगह में जिसे 'बहिश्त' या स्वर्ग कहते हैं प्रवेश करने या रहने की आज्ञा देता है, जहां पर उसे कई प्रकार की स्वादुदार वस्तुएं खाने के लिए और मज़ेदार चीज़ें सूंघने के लिए और बहुत सी सुन्दर २ स्त्रियां भोगने के लिए और पहनने के चमकते हुए वस्त्र पहनने के लिए मिलते हैं तो वह इन बातों पर भी निश्चय कर लेगा। यदि उसे यह बताया जाय कि वह ईश्वर नामक देवता किसी को 'बहिश्त' या 'स्वर्ग' में रख कर वहां उसे मज़ेदार चीज़ें और अन्य वस्तुएं और स्त्रियां आदि का

वस्तु नहीं देता, और केवल अपना दर्शन देकर उसे सुखी करता है, तो वह इस बात पर भी विश्वास कर लेगा। यदि उसे बताया जाय, कि जो जन ईश्वर नामक देवता वा उस की अमुक किताब वा उस की स्त्री वा उस की ओर से भेजी वा दी हुई नहीं मानते, उन पर वह बहुत सख्त नाराज़ होता है, और उनसे अपना बदला लेने की फिकर में रहता है और जब वह मर जाते हैं, तब वह उन्हें एक ऐसे स्थान में रख देता है, कि जिसे नरक कहते हैं, जहां पर उसे सांप और बिच्छू हमेशा काटते रहते हैं, पीप पीने को मिलती है, तो वह इस बात को भी सत्य समझ कर विश्वास कर लेगा। यदि उसे बताया जाय, कि ईश्वर नामक देवता जब किसी मनुष्य से नाराज़ वा गुस्से होता है, तो वह उस के मरने के अनन्तर किसी विशेष काल के बाद उसे एक ऐसे कुण्ड में डालता है, कि जहां सांप बिच्छू तो नहीं होते, किन्तु गंधक के द्वारा सदा आग दहकती रहती है और वह उस में पड़ कर यद्यपि उस आग से सदा जलता रहता है, तथापि उस के द्वारा उस का शरीर जल कर कभी राख नहीं हो जाता, और न कभी मरता है, और वह देवता उसे अनन्त काल तक इसी प्रकार से कष्ट दे २ कर अपना दिल ठंडा करता रहता है, तो वह इन बातों को भी सत्य मान कर उन का विश्वासी बन जाएगा। यदि उसे यह शिक्षा दी जाय, कि कोई मनुष्य ईश्वर नामक देवता की पसन्द के विरुद्ध चाहे कितनी क्रियाएं करे, और वह उस से कितना हि नाराज़ वा नाखुश क्या न हो, परन्तु यदि वह मनुष्य अपने मरने से पहले अमुक स्थान की अमुक मूर्ति के दर्शन कर ले, वा अमुक नदी वा सरोवर वा बावली वा तालाब वा झील आदि में स्नान कर ले, वा उस का थोड़ा सा जल ही पी ले, वा अमुक जन का

उस का विशेष पुत्र वा अमुक जन को उस का विशेष पैगम्बर मान ले, तो उस का सारा गुस्सा दूर हो जाता है और वह उलटा बहुत प्रसन्न होकर उस अपने स्वर्ग वा बहिश्त वा वैकुण्ठ वा अपनी गोद म रखने और तरह तरह का आनन्द भोगने के लिए जगह दे देता है, तो वह इन बातो का भी विश्वासी बन जाएगा। इत्यादि २ ऐसी सकडो प्रकार की मिथ्या और एक दूसरे के विरुद्ध बातो की शिक्षा पाकर करोडो लोग बाल्य काल स ही धीरे २ उन के विश्वासी बन जाते हैं, और लाखो मनुष्यो के हृदयो पर उन के इस प्रकार के मिथ्या विश्वासो का इतना गहरा अधिकार हो जाता है, कि फिर वह कभी भी उन के महा हानिकारक असरो से निकलने के योग्य नही रहते।

प्रश्न। क्या "करामात" वा "माजजा" वा "अलौकिक वा "अद्भुत् क्रियाओ" के नाम स जो नाना प्रकार की कहानिया प्रचलित हैं, वह भी सब मिथ्या है ?

उत्तर। वह भी जहा तक नेचर की सच्ची घटनाओ और उस के सच्चे और अटल नियमो के विरुद्ध हैं, वहा तक अवश्य पूर्णत मिथ्या हैं। यथा —

ईश्वर नामक देवता के अमुक पैगम्बर ने अपनी सूखी सोटी को जिन्दा साप बना दिया था। अमुक सम्प्रदाय के सस्थापक नेचर के नियमानुसार अपनी माता के गर्भ म नही आए थे, किन्तु वह स्वर्ग स उतर कर और एक सफेद हाथी का रूप धारण करके उस के गर्भाशय म घुस गए थे, और फिर वहा से मनुष्य के बच्चे का रूप धारण करके उत्पन्न हुए थे। अमुक धर्म्म प्रवर्तक एक कुमारी कन्या स उत्पन्न हुए थे। अमुक जन न पानी को शराब

खान के भोजन के लिए सारी चीज मिल जाएगी और जब उन्हों ने उस पेड़ पर चढ़ कर उसे हिलाना शुरू किया, तब उस में से नाना प्रकार की इतनी मिठाइयां गिरीं, कि जिन से हजारों जनों के पेट भर गए इत्यादि २। इस प्रकार की और सकड़ों मिथ्या बातें, करामात या माजज़े या अलौकिक क्रियाओं के नाम से प्रचलित की गई हैं।

प्रश्न। ऐसी पूर्णतः मिथ्या गप्पें क्यों घड़ी और फैलाई गई?

उत्तर। किसी कहलाने वाले देवता या देवी या धर्म्म प्रवर्तक या अवतार या साधु या पीर या वली या फकीर या ऋषि या मुनि या गुरु या महात्मा आदि की महिमा को साधारण लोगों के हृदयों में बिठाने और उन में उस के प्रति श्रद्धा के उत्पन्न करने और उन्हें उस का अनुगत बनाने के लिए। इस प्रकार की मिथ्या बातों का प्रचार अब भी जारी है।

प्रश्न। मनुष्य जगत् में धर्म्म या मजहब या अन्य नाना विषयों के सम्बन्ध में जो हजारों मिथ्या गप्पें प्रचलित हुई हैं उन की उत्पत्ति में उस की नीच अनुराग और घृणा शक्तियों ने किस विधि से काम दिया है?

उत्तर। मनुष्य में धारणा, बुद्धि, स्मरण, अनुकरण आदि जो कई प्रकार की मानसिक शक्तियां उत्पन्न हुई हैं उन में एक कल्पना शक्ति भी है। मनुष्य की यह शक्ति जब उस के किसी भाव के द्वारा भड़क उठती है, तब वह उस के सामने उस के मानसिक पट पर कई प्रकार के ऐसे चित्र खैंच कर खड़े करती है कि जिन में से कुछ सत्य भी होते या हो सकते हैं, और कितने ही पूर्णतः मिथ्या भी होते हैं। अब यदि यह पूर्णतः मिथ्या चित्र ऐसे

हो, कि एक ओर उन के विषय मे अविश्वास पदा करने वाली कोई घटनाए उत्पन्न न हो, तो वह उन को कदापि मिथ्या उप न्यस्त न करेगा और उन्हें कदापि मिथ्या न जानेगा। दूसरी ओर यदि उसे वह मिथ्या भी मालूम हो, परन्तु उन में से किसी के प्रति उस मे कोई यथेष्ट घृणा भाव वर्तमान न हो, और इस के उलट उस ऐसी कोई भी मिथ्या उसे अपने किसी नीच अनुराग वा घृणा भाव की तृप्ति देने के कारण रुचिकर वा आकर्षणीय अनुभव होती हो, तो उस को जान बूझ कर भी व्यवहार वा प्रचार करने के लिए खुशी २ तैयार हो जाएगा, और एक वा दूसरी बात को पूर्णत मिथ्या जान कर भी उसे काम मे लाने के लिए अपने भीतर जोरदार प्रेरणा अनुभव करेगा और उस प्रेरणा के अनु सार कार्य्य करेगा। इसीलिए जैसे किसी मिथ्या को मिथ्या न जानकर अथवा किसी मिथ्या को मिथ्या जानकर परन्तु उसके प्रति कोई आवश्यक मात्रा मे घृणा भाव न रखकर मनुष्य अब से हजारों वर्ष पहले से नाना प्रकार की मिथ्याओं का व्यव हार करता रहा है, वैसे ही अब भी करता है और जब तक उस के आत्मा की ऐसी दशा रहेगी, तब तक वह आगे भी इसी प्रकार करता रहेगा।

प्रश्न। कल्पना शक्ति के द्वारा किस तरह से मनुष्य के भीतर मिथ्या चित्र अर्थात् झूठी तस्वीरें बनती है ?

उत्तर। जब कोई मनुष्य सोया हुआ कई प्रकार के स्वप्न कहलाने वाले दृश्य देखता है, तब उस के भीतर उस समय उस की यही कल्पना शक्ति उन दृश्यो के चित्र खचती रहती है, और जब तक उन के विषय मे उस की ज्ञान बोधक स्मरण वा बुद्धि वा कोई इन्द्रिय शक्ति सच्चा बोध उत्पन्न नही करती, तब

तक वह अपने उस स्वप्न विषयक दृश्य को चाहे वह कैसा ही मिथ्या क्यों न हो, सत्य ही अनुभव करता है। यह स्वप्न की दशा में अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा रचे हुए किसी चित्र में देखता है, कि एक साप उस की ओर आ रहा है, और उस ने उस के पास पहुंच कर उस के पांव को काट खाया है और इस दशा में जब वह अपने मरने के भय विषयक भाव के उत्तेजित हो जाने पर घबरा कर जाग उठता है और उस के जागने पर उस की बुद्धि शक्ति भी जो सोई हुई थी जाग उठती है तब यदि वह काफी उन्नत हो चुकी हो, तो वह बताती है कि नहीं नहीं तुम्हें किसी साप ने नहीं काटा, क्योंकि यदि उस ने तुम्हें काटा होता तो तुम्हारे पांव पर उस के दांतों का कोई निशान होता, और वहां पर तुम्हें किसी प्रकार का कुछ दर्द वा कष्ट अनुभव होता। अब जब कि इन में से कोई बात भी नहीं, तब यह तुम ने स्वप्न में जो कुछ देखा है पूर्णत मिथ्या है, और वह फिर इन युक्तियों को ठीक समझकर अपनी बुद्धि की ज्योति में उस पहले दृश्य को झूठ के रूप में देखने के योग्य होकर उसे झूठ मान लेता है।

फिर स्वप्न अवस्था को छोड़ कर मनुष्य की जाग्रत अवस्था में भी उसकी कल्पना शक्ति उसे नाना समयों में मिथ्या दृश्य खेंच कर उन्हें सत्य के रूप में दिखाती रहती है। यथा

रास्ते में जाता २ एक मनुष्य रस्सी के किसी टुकड़े वा कपड़े की किसी काली वा मैली लीर को किसी विशेष दशा में पड़ा हुआ देख कर उसे हठात् साप समझ लेता है, और उस से उस के भीतर का भयभाव भड़क उठता है, और वह उस से भय भीत हो जाता है, जब कि वहां पर सचमुच का कोई भी साप नहीं

[illegible] म मनुष्य की अपनी ही कल्पना शक्ति उसके भीतर [illegible] साप का चित्र खच कर उसे डरा देती है। फिर इस [illegible] कि मनुष्य साप को देख कर डर जाता है, एक [illegible] मनुष्य किसी और मनुष्य को डराकर खुशी [illegible] करने के [illegible] किसी रस्सा वा किसी लीर के टुकडे का एक ऐसी [illegible] देता है, कि उस के पास जान पर वह उसे हठात् [illegible] मालूम हो, और वह उस साप समझ कर डर जाय, और वह [illegible], कि [illegible] उस सचमुच का साँप समझ कर डर [illegible] जब कि वह सत्य रूप से साप नही था।

इसी प्रकार अपनी कल्पना शक्ति के भडक उठने पर [illegible] मुर्दा साप को भी ज़िन्दा साँप समझ कर डर जाता है। [illegible] छोटा बच्चा शेर के बनावटी खिलौने वा किसी "अजायबघर" म किसी मरे हुए चीते की भरी हुई खाल के बनावटी चीते को हाथ लगाने से इसलिए डरता है, कि वह उस काट खाएगा, जब कि वह काट नही सकता, और इस बात का बार २ विश्वास [illegible] पर भी कि वह सचमुच का चीता नही है, और वह उसे कदापि काट नही सकता, वह उसे हाथ से छूना नही चाहता, और वह आग रखकर भी अपनी कल्पना शक्ति के अधिकार मे होने के कारण उस शक्ति ने डर के भाव से उत्त [illegible] होकर उस के भीतर उस मरे हुए और बनावटी चीते को जो जिन्दा परन्तु झूठी तस्वीर पैदा कर दी है, उस तस्वीर को उस समय झूठे रूप मे नही देखता, और उस के चेहरे की आँखें भी उस इस झूठ के दिखाने म कुछ मददगार नही बनतीं।

जब तक कोई मनुष्य अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा खचे

हो, तब तक वह अपना बाहर की आँखों को बाहर के सूर्य वा लप आदि की रोशनी म खुला रख कर भूठ को सत्य और सत्य का भूठ क रूप म रखने के लिए मजबूर ह । क्योंकि सूर्य और लंप की रोशनी उस के मानसिक पट तक नही पहुचती और नही पहुच सकती, और उसे रोशन नही करती और नही दिखा सकती । इसीलिए उस के मानसिक पट पर जा भूठी तस्वार खिचा हुई हो उस वह रोशनी भूठ के रूप मे नही दिखा सकती । बाहर की आख कवल जड पदार्थों क रूप का और वह भी अभ्यास क बाद किसी सीमा तक ठीक २ दिखाती है, और उस से आगे विविध प्रकार की अजीवित और जीवित शक्तियो से भरपूर अन्य जगतो क सूक्ष्म रूपो और उनक सम्बन्ध म नाना प्रकार के सत्यो वा तत्वो को दिखाने की योग्यता नही रखती । इस प्रकार के सत्यो के देखने क लिए उस बाहर की ज्योति से ऊपर अपने ही आत्मा म आन्तरिक मानसिक ज्योति और फिर उससे ऊपर दरजेवार उच्च से उच्च ज्योति के विकसित करने की आवश्यकता है । इसलिए जो मनुष्य जितने अश इस प्रकार की आन्तरिक ज्योति स विहीन होता है उतने ही अश वह अन्धकार की दशा मे रह कर विविध प्रकार स अपनी हानि करता है ।

प्रश्न । भला कितने हि चालाक लोग किसी और मनुष्य क भीतर की कल्पना शक्ति को भडका कर और उसके द्वारा किसी भूठ विश्वास आदि के जाल मे फसा कर किस तरह से अपना कोई मतलब सिद्ध करते हैं ?

उत्तर । दो जन एक दूसर क प्रति मित्र भाव रखते है ।

न्न एक न्यरे क शुभ चिन्तक हैं। अब एक और जन उन म दूर डालन की नीयत स उन म म एक क पास जाकर झूठ मूऽ प्र कहना शुरू करता ह, कि वह अमुक जन अमुक स्थान म तुम्हारी अप्रशसा करता था, और बड जनों को तुम्हारे विरुद्ध भन्ता रर तुम्हे हानि पहुचाने की कोशिश करता था। वह जन जब न्म की यह मिथ्या बात सुनता है, तो उस क अपने प्रशसा प्रिय भाव पर जन्त चोट लगती है, और उस के भीतर अपन उस मित्र के प्रति घृणा भाव भडक उठता ह, उसके जागते हि उसकी कल्पना शक्ति उस क भीतर उस मित्र क सम्बध म एक पूर्णन मिथ्या घृणित तस्वीर बनाने लगती है, और इस घृणित तस्वीर का देखकर उसका अपने उस मित्र के प्रति घृणा भाव और भी बढता जाता है और वह जो कुछ देर पहले अपन न्स मित्र म मिलन जुलन का बहुत इच्छुक था, उसे देखकर प्रसन्न होता और मुसकरा उठता था, और उसे अपने पास बिठाए रखने के लिए बार २ आग्रह करता था, अब उस की शकल तक देखना नहीं चाहता, उस के किसी अच्छे गुण की भी प्रशसा सुनना पसन्द नहीं करता उस म मिलने का इच्छुक नहीं रहता, और उसे अपनी ओर आता देखकर प्रसन्न नहीं होता, जबकि वह अब भी उस के प्रति पहले की न्याई मित्र भाव ही रखता ह वह अब भी उस का पहले की तरह शुभ चिन्तक ही है और उसने किसी के सन्मुख उस की कोई अप्रशसा नहीं की, और किसी को भी उस की हानि करने क लिए नहीं भडकाया और उस के मित्र के भीतर उस के प्रति यह पूर्णत मिथ्या विश्वास उस के भीतर के घृणा भाव और इस भाव क द्वारा उस की कल्पना शक्ति क अन्दर उत्पन्न के कारण ही उत्पन्न हो गया था, और उन्ही क

मिथ्या विश्वास पैदा करने के लिए तयार हो गया, उसी प्रकार नाना देशों में मरे हुए जनों में से कितने ही अधम लोक वासी आत्माएं और उन के स्थूल शरीर धारी अधम पुजारियों और पुरोहितों और नाना सम्प्रदायों के संस्थापकों और नेताओं और विविध प्रकार के अन्य जनों और फिरकों और जमायतों के लोगों में अपने एक या दूसरे अभिप्राय की सिद्धि के लिए हजारों लोगों के भीतर अपने प्रति उन के भीतर श्रद्धा वा विश्वास भाव को उत्पन्न करने और उन्हें अपना अनुगत बना के अपना एक वा दूसरा अभिप्राय सिद्ध करने के लिए भाँति २ की पुराने मिथ्या गप्पें घड़ी और फैलाई हैं और उन्हों ने धर्म्म या मजहब वा किसी और नाम से लोगों के भीतर तरह २ के पुराने मिथ्या और महा हानिकारक विश्वासों की उत्पत्ति की है और इस प्रकार की मिथ्या गप्पों का प्रचार अब भी केवल किसी धर्म्म वा मजहब के नाम से ही नहीं, किन्तु किसी पालीटिकल वा किसी अन्य नाम से भी किया जाता है।

प्रश्न। मनुष्य अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा और भी किसी प्रकार की मिथ्या घड़ता रहा है ?

उत्तर। हां। वह यह जान कर कि मनुष्य में कौतूहल भाव भी वर्तमान है, और यदि वह कोई ऐसी बात वा क्रिया करे, कि जिस में उस के इस कौतूहल भाव की तृप्ति हो, तो वह उस के भीतर एक वा दूसरा प्रकार का मिथ्या विश्वास उत्पन्न करके अपना एक वा दूसरा मतलब सिद्ध कर सकता है, अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा नाना प्रकार की मिथ्या बातें घड़कर और उन के द्वारा नाना प्रकार के मिथ्या विश्वास लोगों में

उत्पन्न करके अपना अभिप्राय सिद्ध करता रहा है।

प्रश्न। कौतूहल भाव क्या होता है?

उत्तर। जब कोई मनुष्य किसी नए वा अद्भुत् वा विचित्र वा विस्मय-जनक किसी दृश्य के देखने वा उसके विषय में किसी बात के सुनने का उत्सुक हो जाता है, तब उस के भीतर के इस भाव को कौतूहल भाव कहते हैं। इस भाव के उत्पन्न हो जाने पर वह किसी अद्भुत् दृश्य को देखकर वा किसी अद्भुत् चीज़ का वर्णन सुनकर विस्मित और बहुत खुश होता है। मनुष्य जगत् में नाना प्रकार के स्वाँगों और नाना प्रकार के अद्भुत् चित्रों वा आकारों और देवी देवता के अद्भुत् रूपों और विविध प्रकार के परिहासों वा लतीफों और कहानियों, नक्लों और तमाशों की उत्पत्ति मनुष्य के इसी भाव के चरितार्थ करने के लिए हुई है। अब यदि किसी ऐसे कौतूहल उत्पादक अद्भुत् दृश्य को देखकर वा उस की कथा सुन कर कि जो पूर्णतः मिथ्या हो, और उस को किसी मनुष्य ने अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा पूर्णतः झूठी रचना की हो, कोई जन उस के बनावटी वा मिथ्या होने का ज्ञान न रखता हो, तो वह उस में विस्मित और हर्षित होने के भिन्न उसे सच जान कर उस का मिथ्या विश्वासी भी बन जाएगा। मज़हब वा धर्म्म के नाम से इस प्रकार के कौतूहल-उत्पादक झूठों का भी बहुत कुछ प्रचार किया गया है।

प्रश्न। आप कृपा करके इस विषय के कुछ दृष्टांत दे सकते हैं?

उत्तर। बेशक। यथा — कितने ही मनुष्यों ने यह जान कर कि यदि मनुष्य के साधारण शारीरिक आकार वा उस के परिवर्तन आदि के विषय में कौतूहल-उत्पादक किसी कथा को

प्रचार किया जाय ता मग और अज्ञानी लोग इस सत्य समझ कर उस पर विश्वास कर लेते हैं, अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा मनुष्य के आकार में पशु जगत् के जीवों के कुछ अंग मिला कर कई प्रकार के नए परन्तु पूर्णतः मिथ्या रूपों की सृष्टि की। जैसे, उन्होंने मनुष्य के आकार में पक्षियों के पर लगा कर एक बनावटी जीव का एक बनावटी नाम रख दिया, और यह प्रचार करना शुरू किया, कि इस प्रकार के जीव आसमान के एक या दूसरे स्थान में रहते हैं और वह पक्षियों की तरह अपने परों से उड़ते हैं और आकाश में उड़ कर इस पृथ्वी पर भी आते हैं। इसी तरह उन्होंने मनुष्य के आकार में सींग वाले पशुओं के से सींग लगाकर इन मिथ्या रूप में कल्पित जीवों का नाम जिन या दैत्य या दानव रख लिया, और कहा कि वह भी आकाश में रहते हैं, और वह भी इस पृथ्वी पर आते और यहां कई प्रकार के काम करते हैं। फिर उन्होंने आदमी के आकार में दो के स्थान में कई हाथ लगा कर यह कहना शुरू किया, कि एक देवता ऐसा है, कि जिस के चार हाथ हैं और अमुक देवी के छः और अमुक देवी की आठ भुजाएं हैं। इसी प्रकार अमुक देवता का पांव से गले तक तो मनुष्य का सा आकार है, परन्तु उसके ऊपर वह हाथी की सूंड रखता है। देवते लोग अपने मनुष्य जैसे रूप को जब चाहते हैं, तब उसे किसी भी पशु या अन्य अस्तित्व के रूप में बदल सकते हैं। अमुक देवता ने एक बार अपना आधा शरीर मनुष्य का सा रखकर दूसरा आधा शेर का सा बना लिया था। अमुक पीर मछली पर सवार होकर किसी नदी की सैर करते हैं। अमुक देवी की जो पत्थर की मूर्ति अमुक जगह में है, उसे मासिक रज होता है। अमुक देवता एक प्रकार के पक्षी पर सवार होकर बाहर

निवलन हैं, ग्रार अमुक दवता एक चूहे पर मवार होकर सर करत हैं। अमुक स्थान क अमुक मन्दिर म एक दवता की मूर्ति वहा म रात म निकल कर सत्तर मील के फासल पर एक स्थान म अपना प्रियतमा के पास चली जाती थी और सवर फिर अपन पहले स्थान मे लौट आती थी। अमुक नदी न एक बार अपन किनार पर एक राजा को टहलते देखकर ग्रार उन क रूप पर मोहित होकर सुदर स्त्री का रूप धारण किया था और उन स विवाह करक उस न एक बच्चा जना था। अमुक देवता आकाश क एक स्थान में एक बडे तख्त पर बैठता ह और अपन दास ग्रार मनुष्यो का सा आकार परन्तु अपन कन्धो पर पक्षियो क पर रखने वाले दूतो को खडा करक उन स हर समय अपनी प्रशसा ध्वनि कराता रहता है, ग्रार उन स कई प्रकार क ग्रार काम भी लेता है। एक बार एक धनुष बाण धारी देवत क एक भक्त किसी तीर्थ स्थान म गए वहा पर उन्होने एक मन्दिर मे उस दवते की सुदर मूर्ति देखकर परन्तु उस धनुष बाण क द्वारा सजा हुआ न पाकर प्रणाम न किया ग्रार उस दवत का मूर्ति को कहा, कि जब तक आप धनुष बाण हाथ म न ल तब तक म आप क स मुख अपना मस्तक नही झुका सकता इस पर उन की भक्ति स प्रसन्न कर उस मूर्ति न झट धनुष बाण धारण कर लिया और तब उन्होन फौरन उसके आगे अपना सिर झुका दिया इत्यादि इत्यादि। इन ग्रार इस प्रकार का और सकडो मिथ्या बातो पर जो सत्य नेचर की सत्य घटनाओ और उस के सत्य और अटल नियमो के पूर्णत विरुद्ध ह और केवल कल्पना शक्ति क द्वारा झूठ मूठ घडी गई है, पृथ्वी क नाना देशो क लाखो और करोडो लाग अब तक भी विश्वास करत हैं।

प्रश्न । कल्पना शक्ति के द्वारा जब कि किसी मनुष्य के भीतर सत्य दृश्यों की सी उत्पत्ति होती है, तब क्या आप उस के विषय में कृपा करके कुछ लिखा नहीं देंगे ?

उत्तर । क्यों नहीं ? प्रथम तुम्हें यह जानना चाहिए, कि जैसे आँख रखने वाले नाना पशुओं में उन की आँखों के द्वारा सत्य वा उन्नत शक्ति की रोशनी वा मदद से जड़ पदार्थों से उत्पन्न हुए नाना अस्तित्वों के आकारों के चित्र उन के मस्तिष्क में प्रकाशित होते हैं और वह उन्हें देखते हैं, वैसे ही उन्हीं की न्याई आँख रखने वाले नाना मनुष्यों के भीतर भी ऐसे चित्र प्रकाशित होते हैं, और वह भी उन्हें देखते हैं। इसी विधि से नाना आँखों वाले पशुओं की तरह नाना और करोड़ों मनुष्य भी अपनी आँखों के द्वारा अपने शरीर के नाना अंगों के देखने के भिन्न अन्य जीवित और अजीवित अस्तित्वों के बाहरी रूपों को देखने की योग्यता रखते हैं, और ऐसे नाना रूपों को यह जहां तक अपनी आँखों के द्वारा बाहर की रोशनी से मिलने पर ठीक २ देखते हैं और उस उन के भीतर का कोई भाव भड़क कर उन्हें सत्य के भिन्न किसी और रूप में नहीं दिखाता, वहां तक वह उन्हें अवश्य सत्य रूप में ही देखते हैं। परन्तु इस से ऊपर जब किसी मनुष्य में किसी प्रकार के दृश्य को देख कर उस का कोई आन्तरिक भाव उत्तेजित हो जाता है, और वह अपने उस विशेष भाव से परिचालित होकर किसी मनुष्य वा पशु वा वृक्ष वा अन्य पदार्थ के रूप की ओर लगता है वा नेचर के किसी अस्तित्व वा विधान विषयक किसी सत्य वा तत्व के खोजने वा जानने का इच्छुक बनता है तब उस के भीतर किसी ऐसे भाव के उत्तेजित होने पर उस के भीतर की कल्पना शक्ति उत्तेजित होकर उस के मानसिक पट पर एक वा

दूसरे प्रकार के जो २ चित्र खचने वा उस कार्य बात सुभान लगती है उन म स जितना व तें कई बार जहा सत्य नहा होती, वहा कितनी ही बातें सत्य वा ठीक भा होती है। इसीलिए यदि किसी मनुष्य में सौ न्दय भाव वतमान हो, तो वह उस के द्वारा अनुप्राणित होकर जब सकन्द वृक्षा के झुडो और हरी घास म आच्छादित किस। एसी पवन श्रेणी वा पत्र पुष्पा म भर हुए किसी विशेष जलाशय वा पुष्पा स आच्छादित किसी लता वा किसी मनुष्य वा पशु आदि की ओर देखता है कि जिन म नचर के किसी प्रकार के सौन्दय का प्रकाश हुआ हो तब वह अपन आन्तरिक सौदय बोध और अनुराग के द्वारा अपनी कल्पना शक्ति के जाग्रत हो जान और उस के काव्य करन पर अपने भीतर उन के सम्बन्ध मे जिस २ प्रकार के सुदर दृश्यो को देखता है उह इस सौन्दय भाव से विहीन एक और जन नही दखता और सौन्दय भावी जन उनम स किसी के सौन्दय का जसा कुछ गद्य वा पद्य के द्वारा वणन करता है उस दूसरा जन दृष्टा के रूप मे कदापि वणन नही कर सकता। इसी प्रकार जो जन अपने आत्म म दया वा सम्वेदना विषयक भाव रखता हो वह भाव के उद्वलित होने और उसके द्वारा अपनी कल्पना शक्ति के काव्य करने पर किसा दुखिया के दुख दद के जिस २ प्रकार के करुणा उत्पादक चित्र दखता है, और उनका वणन करता है, वह हृदय इस दया वा सम्वेदना भाव स विहीन। कोई जन न तो अपने भीतर देख हा सकता है, और न उन का दृष्टा के रूप म कुछ वणन ही कर सकता है। इसी प्रकार जो जन किसी प्रकार की मिथ्या वा किसी प्रकार के पाप कर्म्म के लिए अपने भीतर कोई सच्ची घृणा रखता है, वह अपने उस घृणा भाव से परिचालित होने पर

ग्रार न्स के द्वारा अपना कल्पना शक्ति के काय करने पर उस पाप कम्म क हानिकारक रूप के सम्बन्ध म जिस २ प्रकार क दृश्य रचना या उन की वणन करता है, उसमे विहीन कोई ग्रौर जन नहीं देखता ग्रार नही देख सकता, ग्रौर एक दृष्टा की भाई उनका वणन भा नही कर सकता। इसी तरह जा जन पर हित उत्पादक किसी ग्रौर सात्विक वा उच्च भाव स उद्वलित होकर ग्रार उस के द्वारा ग्रपनी कल्पना शक्ति को परिचालित करके ऐसा एमे परोपकार विषयक काम का जसी सुदर छबि वा महिमा देखता वा उस का वणन करता है, वह उस भाव मे विहीन काइ ग्रार जन नहीं देख सकता, ग्रौर एक दृष्टा की भाइ उस का वणन भी नही कर सकता। इसालिए जब कोई मनुष्य ग्रपन किसी उच्च ग्रनुराग वा उच्च घणा भाव से परिचालित होकर किसी विषय मे कुछ कहना वा बालना वा लिखना वा कोई ग्रौर रचना करना ग्रारम्भ करता है तब ग्रनुकूल दशा के मिलने पर ज्यो २ उसका वह भाव उभर २ कर सतेज वा जोरदार होता जाता है त्यो २ उसकी कल्पना शक्ति के द्वारा उसके मानसिक पट पर नई स नई तस्वीर बनता ग्रौर उस के सम्मुख प्रगट होता चला जाती है, ग्रौर वह उन का ग्रपन भाव क वेग से शीघ्र २ ग्रार बहुत सुगमता के साथ वणन करता चला जाता है परन्तु जब किसा कारण स उस के भीतर की ऐसी तस्वीरो के बनने मे कोई व्याघात् उत्पन्न हो जाता है, तब उस वक्ता वा लेखक वा रचना कर्त्ता की वणना मे भी व्याघात् उत्पन्न हो जाता है। किसी विषय म किसी मनुष्य के अनुप्राणित वा "इन्स्पायर" होने का सच्चा रहस्य यही है।

वस्तुत ग्रच्छा कल्पना शक्ति ग्रौर किसी प्रबल भाव

और उन दोनों के साथ जिस २ प्रकार की ज्योति के प्रकाश की आवश्यकता है उस ज्योति की वर्तमानता के बिना किसी मनुष्य के मानसिक पट पर कोई सत्य और भली भांति स्पष्ट दृश्य नहीं बनते। परन्तु यह सत्य सदा स्मरण रखना चाहिए कि इन बातों के वर्तमान होने पर भी किसी जन के मानसिक पट पर जो तस्वीरें बनती हैं, वह सब की सब और सदा सत्य नहीं होतीं किन्तु कुछ उन में से पूर्णतः सत्य कुछ पूर्णतः मिथ्या, और कुछ सत्य और मिथ्या से मिली जुली होती हैं।

प्रश्न। तब यह क्योंकर मालूम हो कि नेचर के जिस किसी विभाग वा उस विभाग के जिस किसी अंश के सम्बन्ध में मनुष्य कोई बातें कहता वा बताता है, उन में से कौन २ सी बात सत्य और कौन २ सी मिथ्या हैं ?

उत्तर। इस के लिए—

(१) उस नेचर के उस विभाग के सम्बन्ध में अपने पहले जमे हुए सब प्रकार के संस्कारों और विश्वासों के अधिकार और उन के विषय में अपने भीतर के सब प्रकार के पक्षपात से ऊपर होने की आवश्यकता है।

(२) उस नेचर के उस विभाग के सम्बन्ध में सत्य की खोज का आकांक्षी बनने और ऐसी खोज के लिए "वैज्ञानिक विधि" के नाम से जो विधि इस काल में प्रचलित है उसे सरल भाव से ग्रहण करने और उसे काम में लाने की आवश्यकता है।

प्रश्न। बिल्कुल ठीक है। परन्तु मनुष्य जगत् की वर्तमान अवस्था में यद्यपि नेचर के एक वा दूसरे निम्न विभागों के सम्बन्ध में कुछ २ जनों ने ऐसी थोड़ी वा बहुत योग्यता पाकर जहां तक बहुत प्रशंसनीय खोज की है, उस से उन विभागों के सम्बन्ध में

सत्य ज्ञान की बहुत आश्चर्य जनक उन्नति हुई है, तथापि शोक, कि वर्त्तमान वाले मजहब वा धर्म्म के नाम से नाना प्रकार के वर्तमान सम्प्रदायों में तो इन दोनों बातों का ही पूर्ण रूप से अभाव देखा जाता है।

उत्तर। सत्य है, इसीलिए देवसमाज संस्थापक देवात्मा के भिन्न मनुष्यात्मा के सम्बन्ध में सत्य नेचर की अटल बुनियाद पर स्थापित और पूर्णतः विज्ञान सम्मत सत्य ज्ञान वा सत्य धर्म्म के तत्वों का और किसी जन ने इस पृथ्वी में कहीं भी प्रचार नहीं किया।'

मिथ्या और भ्रान्ति–दोनों में अन्तर।

प्रश्न। इन धारणा वा संस्कार विषयक नाना प्रकार के मिथ्या विश्वासों के भिन्न क्या कोई मनुष्य न चाह कर भी किसी प्रकार की भ्रांति या किसी भ्रम में पतित हो जाता है ?

उत्तर। जी हां। मनुष्य न चाह कर भी कई प्रकार की भ्रांतियों वा भूलों में पतित हो जाता है। यथा —

(१) अनुमान विषयक भ्रांति वा भूल।
(२) स्मरण विषयक भ्रांति वा भूल।
(३) विचार वा तर्क विषयक भ्रान्ति वा भूल।
(४) वाद अन्य भ्रांति वा भूल।

प्रश्न। यह भ्रांतियां किस प्रकार की हैं ?

उत्तर। नेचर में प्रति दिन एक वा दूसरे प्रकार की जो २ घटनाएं उत्पन्न होती रहती हैं, उन में से एक वा दूसरी घटना के कारण के विषय में जब कोई मनुष्य कोई कल्पना करता है तब

वह अपने इस कल्पना मूलक अनुमान में कई बार भ्रांति की ओर जाता है। यथा —अपनी वा किसी और जन वा पशु वा पौदे की किसी बीमारी का कारण खोजने में किसी वस्तु के चले जाने पर उस के चले जाने का कारण मालूम करने में और ऐसा ही और नाना घटनाओं के कारणों के विषय में। इसी प्रकार स्मरण शक्ति में किसी विघ्न के उपस्थित होने पर एक वा दूसरी बात के स्मरण करने में भ्रान्ति हो जाती है। फिर किसी के मुंह से किसी बात वा उपदेश वा उस के किसी लेख वा किसी की रची हुई किसी पुस्तक आदि के किसी विषय के समझने में मनुष्य कई बार उस कुछ का कुछ समझ कर कई प्रकार की भ्रान्ति में पड जाता है। किसी यूनिवर्सिटी आदि की ओर से किसी परीक्षा में बैठ कर एक वा दूसरे विषय सम्बन्धी प्रश्नों वा कई बार किसी और जन के प्रश्नों का उत्तर देने के समय अथवा अपनी ओर से हि किसी गणना के करने वा हिसाब आदि के निकालने में कई प्रकार की भूल कर बैठता है?

प्रश्न। तब क्या कोई ऐसा मनुष्य नहीं हो सकता कि जो कभी भी किसी भ्रान्ति में न पड सकता हो, वा न पडा हो?

उत्तर। नहीं, ऐसा कोई मनुष्य हो नहीं सकता कि जो एक वा दूसरे समय में किसी भी एक वा दूसरे प्रकार की भ्रान्ति में न पडा हो, वा न पड सकता हो, क्योंकि नेचर में कोई मनुष्य पूर्णत अभ्रान्त हो ही नहीं सकता। इसलिए नेचर में ऐसा कोई अस्तित्व नहीं, कि जो सर्वज्ञ और सब प्रकार की भ्रान्ति से पूर्णत शून्य हो। 'ईश्वर' वा किसी और नाम से पुकारे जाने वाले कोई देवता वा किसी नाम से पुकारी जाने वाली कोई देवी वा "ईश्वर" वा किसी और देवता के कहलाने वाले अवतार अथवा

सत्य ज्ञान की बहुत आश्चर्य-जनक उन्नति हुई है, तथापि शोक, कि वर्तमान काल मजहब वा धर्म के नाम से नाना प्रकार के वर्तमान सम्प्रदायों में तो इन दोनों बातों का ही पूर्ण रूप से अभाव देखा जाता है।

उत्तर। सत्य है इसीलिए देवसमाज सस्थापक देवात्मा के भिन्न मनुष्यों में के सम्बन्ध में सत्य नेचर की अटल बुनियाद पर स्थापित और पूर्णतः विज्ञान सम्मत सत्य ज्ञान वा सत्य धर्म के रत्नों का और किसी जन ने इस पृथ्वी में कहीं भी प्रचार नहीं किया।

मिथ्या और भ्रान्ति–दोनो में अन्तर।

प्रश्न। इन धारणा वा सस्कार विषयक नाना प्रकार के मिथ्या विश्वासों के भिन्न क्या कोई मनुष्य न चाह कर भी किसी प्रकार की भ्रान्ति वा किसी भ्रम में पतित हो जाता है ?

उत्तर। जी हां। मनुष्य न चाह कर भी कई प्रकार की भ्रान्तियों वा भूलों में पतित हो जाता है। यथा —

(१) अनुमान विषयक भ्रान्ति वा भूल।
(२) स्मरण विषयक भ्रान्ति वा भूल।
(३) विचार वा तर्क विषयक भ्रान्ति वा भूल।
(४) कोई अन्य भ्रान्ति वा भूल।

प्रश्न। यह भ्रान्तियां किस प्रकार की है ?

उत्तर। नेचर में प्रति दिन एक वा दूसरे प्रकार की जो २ घटनाएं उत्पन्न होती रहती हैं, उन में से एक वा दूसरी घटना के कारण के विषय में जब कोई मनुष्य कोई कल्पना करता है तब

वह अपने इस कल्पना मूलक अनुमान म कई बार भ्रांति को प्राप्त जाता है। यथा —अपनी वा किसी और जन वा पशु वा पौद की किसी बीमारी का कारण खोजन मे किसी वस्तु के चले जान पर उस के चल जान का कारण मालूम करन म और एसा ही और नाना घटनाओं के कारणों क विषय म। इसी प्रकार स्मरण शक्ति म किसी विघ्न क उपस्थित होन पर एक वा दूसरी बात क स्मरण करन म भ्रान्ति हो जाती है। फिर किसी क मुह से किसी बात वा उपदेश वा उस के किसी लेख वा किसी की रची हुई किसी पुस्तक आदि के किसी विषय के समझने म मनुष्य कई बार उसे कुछ का कुछ समझ कर कई प्रकार की भ्रान्ति मे पड जाता है। किसी यूनिवर्सिटी आदि की ओर म किसी परीक्षा म बैठ कर एक वा दूसर विषय सम्बन्धी प्रश्नो के कई बार किसी और जन के प्रश्नो का उत्तर देन क समय अथवा अपनी ओर से हि किसी गणना के करन वा हिसाब आदि क निकालन म कई प्रकार की भूल कर बैठता है?

प्रश्न। तब क्या कोई एसा मनुष्य नहीं हो सकता कि जो कभी भी किसी भ्रान्ति म न पड सकता हो वा न पडा हो?

उत्तर। नही, एसा कोई मनुष्य हो नहीं सकता कि जो एक वा दूसरे समय म किसी भी एक वा दूसर प्रकार की भ्रान्ति म न पडा हो, वा न पड सकता हो क्योंकि नेचर म कोई मनुष्य पूर्णतः अभ्रान्त हो ही नहीं सकता। इसलिए नेचर मे एसा कोई अस्तित्व नहीं, कि जो सर्वज्ञ और सब प्रकार की भ्रान्ति से पूर्ण शून्य हो। ईश्वर वा किसी और नाम से पुकारे जाने वाले कोई देवता वा किसी नाम स पुकारी जाने वाली कोई देवी, वा "ईश्वर" वा किसी और देवता के कहलाने वाले अवतार, अथवा

किसी धर्म मत के प्रवर्तक, वा कहलाने वाले योगी वा भक्त वा ऋषि मुनि कोई भी और कभी भी सर्वज्ञ वा त्रिकाल दर्शी न थे, और न अब कोई हैं। इस प्रकार का विश्वास पूर्णतः मिथ्या है, और ऐसे सर्वज्ञ कहलाने वालों की नाना बतलाई हुई बातों में एक ओर परस्पर विरोध और दूसरी ओर सत्य के नाम से उन की बताई जाती बातों का नेचर के अटल नियमों के विरुद्ध अर्थात् पूर्णतः असम्भव होना उन के भ्रान्त होने और सर्वज्ञ न होने का ज्वलन्त और अकाट्य प्रमाण है।

प्रश्न। भ्रान्त और मिथ्याचारी मनुष्य में क्या अन्तर है?

उत्तर। बहुत बड़ा अन्तर है। भ्रान्त मनुष्य किसी असत्य बात को सत्य विश्वास करके वा सत्य मान कर उसे सरल भाव से सत्य कहता वा प्रगट करता है, अथवा उसके सम्बन्ध में कोई और साधन वा क्रिया करता है। परन्तु मिथ्याचारी मनुष्य नाना बातों वा घटनाओं को असत्य जान कर भी उन्हें कपटता के द्वारा और जान के मनुष्य झूठ मूठ सत्य बताता वा प्रगट करता है, और उन्हें अपनी कपटता के द्वारा धोखे में डालने की चेष्टा करता है।

प्रश्न। यदि कोई जन अन्य लोगों से किसी प्रकार के मिथ्या विश्वास को प्राप्त होकर सरल भाव से उसे किसी और के सन्मुख सत्य कह कर उस का प्रचार करता हो, तो क्या वह मिथ्याचारी नहीं?

उत्तर। नहीं, परन्तु यदि कोई जन अपने किसी ऐसे मिथ्या विश्वास के द्वारा किसी मनुष्य वा पशु वा अन्य अस्तित्व के सम्बन्ध में कोई अपकरण वा पाप मूलक क्रिया करता हो, अथवा उसके

द्वारा किसी और मनुष्य को किसी के सम्बन्ध में किसी पाप मूलक क्रिया के करने के लिए प्रेरणा करता हो, तो वह अपने किसी ऐसे विश्वास के द्वारा, चाहे वह उस को सरल भाव से हि प्रचार करता हो, पापी वा अपराधी बन कर पतित अवश्य होता है। यथा —

यदि किसी के भीतर किसी की शिक्षा से बाल्य काल से यह विश्वास उत्पन्न हो गया हो कि मांसाहार करना, वा मांसाहार वा शिकार के लिए किसी जीव का वध करना, वा अपनी पत्नी वा अपने पति के इस दुनिया में जीते हुए और विवाह करना वा अपने धर्म मत के विरुद्ध किसी धर्म मत रखने वाले जन को सताना वा निहत करना ठीक है और वह इस प्रकार के किसी विश्वास से परिचालित होकर सरल भाव से भी कोई ऐसी क्रिया करता हो तो भी वह उस के द्वारा अवश्य पापी वा अपराधी या नीच वा पतित बनता है।

प्रश्न। यदि कोई जन सत्य के विरुद्ध कुछ ऐसे विश्वास रखता हो कि जिन के द्वारा वह न तो आप किसी के सम्बन्ध में कोई पाप वा अत्याचार करता हो, और न किसी और को किसी पाप वा अत्याचार करने के लिए प्रेरणा करता हो यथा यह पृथ्वी शेषनाग के फना वा गौ के सींग पर ठहरी हुई है अथवा सूर्य इस पृथ्वी के चारों ओर फिर कर उस की परिक्रमा करता है, अथवा गंगा लक्ष्मी गौ लोक से अवतीर्ण हुई है अथवा पृथ्वी गोल नहीं किन्तु चपटी वा सपाट है और वह इन बातों को सत्य जान कर सरल भाव से उन्हें औरों के सन्मुख सत्य बताता हो, तो वह मिथ्यावादी है वा नहीं ?

उत्तर। नहीं परन्तु वह अपने इन मिथ्या विश्वासों के

न्ध, ने ग्रज्ञान वा ग्रन्धकार की ग्रवस्था मे जरूर है, कि जिन
। ग्रवसर पाने पर उस के लिए उद्धार पाना उचित है।

प्रश्न । क्या किसी उपन्यास वा कहानी वा कथा वा किसी
र स लग की रचना मे जो लोग एक वा दूसरे प्रकार की कल्पित
जाना वा वर्णन करते है, उस मे वह मिथ्याचारी नही बनते ?

उत्तर । जहा तक कोई जन ग्रपनी कल्पना शक्ति के द्वारा
जान बूझ कर कोई ऐसी रचना नही करता कि जिसे पढकर कोई
जन जेचर के किसी ग्रस्तित्व वा विषय के सम्बन्ध में मिथ्या ज्ञान
लाभ कर, ग्रथवा उस की रचना को पढ कर किसी जन के भीतर
किसी मनुष्य वा पशु ग्रादि क सम्बन्ध म किसी ग्रन्याय वा ग्रत्या
चार मूलक क्रिया के करने के लिए कोई प्रेरणा उत्पन्न हो, वहाँ
तक वह ग्रपनी किसी कल्पित रचना के द्वारा मिथ्याचारी नहीं
बनता।

प्रश्न । क्या किसी तमाशे वा कौतूहल के द्वारा निर्दोष सुख
लाभ करने के लिए कोई स्वाग भरना, ग्रर्थात् किसी ग्रौर क रूप
वा शब्द वा उस की किसी क्रिया की नकल करना ग्रौर उस नकल
क ग्रनुसार ग्रपने ग्रापको कुछ ग्रौर बताना वा प्रगट करना मिथ्या
चार नहीं ?

उत्तर । नही, परन्तु यदि कोई जन कोई ऐसी नकल कर,
कि जो किसी ग्रौर जन क सम्बन्ध म वास्तविक ग्रपमान मूलक वा
किसी सम्प्रदाय के लोगो के लिए ग्रकारण कष्ट दायक हो, तो उस
का करना ठीक नहीं हो सकता ।

प्रश्न । यदि कोई मनुष्य किसी स एसा प्रश्न करे, कि जिस
का उत्तर देने के लिए वह एक ग्रोर धर्म्म विषयक किसी सत्य
नियम के द्वारा बाध्य न हो, ग्रौर दूसरी ग्रोर उस का सत्य उत्तर

देन मे उस की वा किसी और की हानि होती हो, वा किसी ऐसी हानि का अन्देशा हो तब वह क्या करे ?

उत्तर। तब वह ऐसे प्रत्येक प्रश्न का उत्तर देने से विनय पूर्वक इन्कार कर दे, अर्थात् वह यह कह दे कि मैं आप के इस प्रश्न का कोई उत्तर देना उचित नहीं समझता और इसलिए उस का कोई उत्तर देना नहीं चाहता। ऐसा करने का उसे पूर्ण अधिकार है।

प्रश्न। सत्य के विरुद्ध कोई बात कहकर वा बताकर किसी चोर वा डाकू मनुष्य को पकड़ना मिथ्याचार है वा नहीं ?

उत्तर। बेशक मिथ्याचार है। इस प्रकार के सब प्रश्नों के सम्बन्ध में जिस साधारण नैतिक नियम के जानने की जरूरत है वह यह है —

जब तक कोई जन अपनी कल्पना और अनुकरण शक्तियों से प्रेरित होकर और जान बूझकर अपनी ओर से अपनी किसी बात चीत वा अपने किसी सङ्केत (इशारा) वा अपनी किसी रचना वा अपने किसी लेख वा उपदेश आदि के द्वारा किसी मनुष्य को किसी प्रकार के भ्रम वा मिथ्या विश्वास मे ग्रस्त करने वा उसे मिथ्याचारी बनाने अथवा नेचर के किसी जीवित वा अजीवित अस्तित्व के सम्बन्ध में अपनी ओर से किसी जन के हृदय मे किसी अन्याय मूलक क्रिया अर्थात् पाप वा अपराध वा अत्याचार वा हानि करने के लिए कोई प्रेरणा नहीं करता, तब तक वह उन्हें किसी भी उचित वा हितकर अभि-प्राय के लिए जिस प्रकार से चाहे काम में ला सकता है, और जन समाज की विविध प्रकार की उन्नति मे सहायक बन सकता

विचार से अज्ञान वा अन्धकार की अवस्था मे जरूर है, कि जिन को अवसर पाने पर उन के लिए उद्धार पाना उचित है।

प्रश्न। क्या किसी उपन्यास वा कहानी वा कथा वा किसी गद्य लेख की रचना मे जो लोग एक वा दूसरे प्रकार की कल्पित बातो का वर्णन करते है, उन से वह मिथ्याचारी नही बनते ?

उत्तर। जहा तक कोई जन अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा जान बूझ कर कोइ ऐसी रचना नही करता कि जिसे पढकर कोइ जन नेचर के किसी अस्तित्व वा विषय के सम्बन्ध मे मिथ्या ज्ञान लाभ करे, अथवा उस की रचना को पढ कर किसी जन के भीतर किसी मनुष्य वा पशु आदि के सम्बन्ध मे किसी अन्याय वा अत्याचार मूलक क्रिया के करने के लिए कोई प्रेरणा उत्पन्न हो, वहाँ तक वह अपनी किसी कल्पित रचना के द्वारा मिथ्याचारी नही बनता।

प्रश्न। क्या किसी तमाशे वा कौतूहल के द्वारा निर्दोष रूप लाभ करने के लिए कोई स्वाग भरना, अर्थात् किसी और के रूप वा शब्द वा उस की किसी क्रिया की नकल करना और उस नकल के अनुसार अपने आपको कुछ और बताना वा प्रगट करना मिथ्याचार नही ?

उत्तर। नही, परन्तु यदि कोई जन कोई ऐसी नकल करे कि जो किसी और जन के सम्बन्ध मे वास्तविक अपमान मूलक वा किसी सम्प्रदाय के लोगो के लिए अकारण कष्ट दायक हो, तो उस का करना ठीक नही हो सकता।

प्रश्न। यदि कोई मनुष्य किसी से ऐसा प्रश्न करे कि जिस का उत्तर देने के लिए वह एक ओर धर्म्म विषयक किसी सत्य नियम के द्वारा बाध्य न हो, और दूसरी ओर उस का सत्य उत्तर

देने मे उस की वा किसी और की हानि होता हो, वा किसी ऐसी हानि की आशका हो, तब वह क्या करे ?

उत्तर । तब वह ऐसे प्र येक प्रश्न का उत्तर देने से विनय पूर्वक इकार कर दे, अर्थात् वह यह कह दे कि मैं आप क इस प्रश्न का कोई उत्तर देना उचित नही समझता और इसलिए उस का कोई उत्तर देना नहो चाहता । ऐसा करने का उसे पूर्ण अधिकार है।

प्रश्न । सत्य के विरुद्ध कोई बात कहकर वा बताकर किसी चोर वा डाकू मनुष्य का पकडना मिथ्याचार है वा नही ?

उत्तर । बेशक मिथ्याचार है । इस प्रकार क सब प्रश्नो क सम्बन्ध म जिस साधारण नतिक नियम के जानन की जरूरत है वह यह है —

जब तक कोई जन अपनी कल्पना और अनुकरण शक्तिया स प्रेरित होकर और जान बूझकर अपनी ओर मे अपना किसी बात चीत वा अपने किसी सकेत (इशारे) वा अपनी किसी रचना वा अपने किसी लेख वा उपदेश आदि क द्वारा किसी मनुष्य को किसी प्रकार क भ्रम वा मिथ्या विश्वास मे ग्रस्त करने वा उसे मिथ्याचारी बनाने अथवा नचर के किसी जीवित वा अजीवित अस्तित्व क सम्बन्ध म अपनी ओर स किसी जन क हृदय में किसी अन्याय मूलक क्रिया अर्थात् पाप वा अपराध वा अत्याचार वा हानि करने के लिए कोई प्रेरणा नही करता, तब तक वह उन्हे किसी भी उचित वा हितकर अभिप्राय क लिए जिस प्रकार स चाहे काम म ला सकता है, और जन समाज की विविध प्रकार की उन्नति मे सहायक बन सकता

है। परन्तु जैसा पहले बताया जा चुका है वह अपनी ऐसी प्रत्येक क्रिया के सम्बन्ध में भी सत्य वा हित विषयक अपनी किसी भ्रान्ति के लिए अवश्य जिम्मेवार रहता है।

प्रश्न। क्या लोगों "ईश्वर" वादियों का यह विश्वास मिथ्या नहीं कि मनुष्य को उनके कहलाने वाले ईश्वर ने "स्वाधीन" उत्पन्न किया है, और वह लोग किसी मिथ्या बात को सत्य मानने और उसे सत्य मानकर उस पर विश्वास करने वा कोई भी मिथ्या मूलक आचरण करने के लिए अपनी प्रकृति से ही मजबूर नहीं है?

उत्तर। बेशक पूर्णतः मिथ्या है क्योंकि मनुष्य अपने बाल्यकाल में क्या अपने माता पिता आदि पालन कर्त्ताओं वा सरक्षकों से और क्या अन्य जनों से सम्स्कार के द्वारा जिस २ प्रकार के मिथ्या विश्वासों को ग्रहण करता है, और अपने नाना प्रबल नीच अनुरागों और अपनी नाना प्रबल नीच घृणाओं के अधीन होने के कारण उन के द्वारा परिचालित होकर अपने आप भी जिन नाना प्रकार के अन्य मिथ्याचारों और अन्याय वा अहित मूलक चिन्ताओं वा क्रियाओं के करने के लिए अपने आप को मजबूर पाता है, वह सब की सब सत्य घटनाएं पूर्ण रूप से इस बात की साक्षी देती है कि मनुष्य कदापि "स्वाधीन" नहीं है। किन्तु उस के विरुद्ध अपनी ही जन्म जात कितनी नीच शक्तियों और उन के द्वारा उन के नाना तृप्ति दायक जनों आदि के अधीन होने के कारण निश्चय पराधीन है। फिर केवल मनुष्य ही नहीं, किन्तु उस के भिन्न प्रत्येक जीवित अस्तित्व जो पूर्ण नेचर का एक अंश होने के कारण अपने जीवन की रक्षा और उस के विकास के निमित्त नेचर के अन्य अस्तित्वों पर निर्भर करता है,

व॰ कभी ग्रौर किसी दशा मे "स्वाधीन" नहा होता ग्रौर इसीलिए कभी भी स्वाधीन नहीं कहा जा सकता ।

प्रश्न । यदि मनुष्य ग्रपन नाना विश्वासा ग्रौर मता ग्रौर ग्रपनी नाना चिन्ताग्रा ग्रौर क्रियाग्रा क सम्ब ध म स्वाधीन नही तो फिर किसी राज या ग्रन्य सामाजिक शासन की ग्रोर स उस स्य का किसी ग्रपराध-मूलक क्रिया क लिए दण्ड क्या दिया जाता है ?

उत्तर । इसलिए कि उस क द्वारा उन क हाथो म जन समाज के उचित ग्रधिकारा की रक्षा की जाय, ग्रौर वह उसी तरह जिस तरह ग्रौर नाना हानिकारक पशुग्रा के ग्राक्रमण स मनुष्य ग्रपनी वा ग्रौरा की रक्षा करता है । यदि कोई जन किसी ग्रौर के शरीर वा प्राण वा मान वा उस की सम्पत्ति ग्रादि विषयक किसी उचित ग्रधिकार के सम्बन्ध म कोई हस्तक्षेप वा ग्रापत्ति जनक क्रिया न कर, तो फिर वह ग्रपने किसी धम्म विषयक मिथ्या विश्वास ग्रथवा सुख विषयक ग्रपने किसी नीच ग्रनुराग, वा ग्रपनी किसी सत्य विषयक ग्रज्ञानता वा ग्रन्धता ग्रादि क कारण चाहे ग्रपने ग्रात्मा की ग्रौर उस के भिन्न ग्रपने शरीर की भी (नाग रिक हत्या क समय विफल काम होने के सिवाय) चाहे कैसी हि ग्रौर कितनी ही हानि ग्रौर ग्रपने धन ग्रादि किसी पदार्थ का चाहे कैसा हि ग्रनुचित व्यवहार क्यो न कर, उस म इस काल की कोई सुसभ्य गवर्नमेंट साधारणत कोई हस्तक्षेप नही करती ग्रौर उस की किसी ऐसी क्रिया के लिए उसे कोई दण्ड वा सजा नही देती।

तीसरा परिच्छेद ।

आत्मिक अबोधता और बोधता ।

प्रश्न । आप यह महान सत्य बता चुके हैं, कि किसी मनुष्य के आत्मा को उस की जिस किसी पतनकारी गति के द्वारा हानि होती है, उसके सम्बन्ध में उसमें जब तक कोई घृणा और दुख उत्पादक सच्चा और यथेष्ट बोध न हो, तब तक वह उस से सच्चा मोक्ष नहीं पा सकता । यदि ऐसी आत्मिक अबोधता और बोधता के विषय में भी आप कुछ और अधिक ज्ञान दे सकें तो बड़ी कृपा हो ।

उत्तर । बहुत अच्छा । इस विषय में तुम प्रश्न करो।

प्रश्न । आत्मिक अबोधता और बोधता से क्या मुराद है ?

उत्तर । मनुष्य का अपने आत्मा के अस्तित्व, उस के गठन प्राप्त प्रकृत रूप, उस के पतन और उस पतन से उसको मोक्ष और उस के विकास विषयक नाना प्रकार के सत्यों को न देखने वा न उपलब्ध करने की अवस्था का नाम आत्मिक अन्धता वा अबोधता है ।

जिस प्रकार उद्भिद् वा पशु जगत् के जीवित अस्तित्व जीवन विषयक कई क्रियाएं सम्पादन करके भी अपनी २ जीवनी शक्ति के अस्तित्व और उस के बनने और बिगड़ने और नष्ट होने के विषय में कोई मानसिक बोध वा ज्ञान नहीं रखते, वैसे ही करोड़ों मनुष्य भी शारीरिक जीवन की रक्षा आदि के सम्बन्ध में कई प्रकार

का दनिक क्रियाए करके और उन म से कितने ही पढे लिखे वा विद्वान होकर भी एक ओर अपने नीच अनुरागो और अपनी नीच घणाओ से प्रसूत अपने आत्मिक अन्धकार और दूसरी ओर आत्मिक अन्धकार नाशक और आत्म-प्रकाशक ज्योति से विहीन होने के कारण अपने २ आत्मा और उसके उन्नत और बिगडने वा पतन वा नाश के सम्बन्ध म कोई सच्चा ज्ञान वा बोध नही रखते।

प्रश्न। मनुष्य कब और किस अवस्था म एक वा दूसरी बात के विचार से अबोधी वा बोधी समझा जा सकता है?

उत्तर। मनुष्य का आत्मा किसी स्त्री के गर्भाशय म अनुकूल दशा को प्राप्त होकर जब अपने लिए एक पूर्णाङ्ग जानदार शरीर निर्म्माण कर लेता है, तब उस म यद्यपि वह कई प्रकार के बोध दायक अग बना लेता है, तथापि वहाँ रह कर वह उन अगो के द्वारा कोई बोध लाभ करने के योग्य नही होता। यथा —वह वहा अपने शरीर म आखें रखता है, परन्तु उन के द्वारा वह अपने वा अपनी माता के शरीर को नही देखता। वह वहा अपने शरीर म कान रखता है, परन्तु वहा वह अपनी माता वा किसी और की किसी आवाज को नही सुनता। वह वहा अपने शरीर म नाक रखता है, परन्तु वह वहा किसी गध को अनुभव नही करता। वह वहा अपने शरीर मे जीभ रखता है, परन्तु वह वहा उस के द्वारा किसी स्वाद को अनुभव नही करता, और इसीलिए वह वहा पर रूप, रस, शब्द, गध और स्पर्श विषयक जितने स्नायु सापेक्षा बोध हैं, उन सब के विचार से पूर्णत अबोधी वा अज्ञानी होता है। माता के गर्भाशय की दुनिया म जब तक वह वास

रहता है, तब तक वह इस प्रकार की बोधक शक्तियां रख कर भी उन के विचार में पूर्णत अन्धकार वा अज्ञान वा बेबोधताओं की दशा में रहता है। अब जो जन इस प्रकार की बाधाओं से निरस आए हों, और रूप, रस, शब्द, गंध विषयक बोध को प्राप्त हो चुके हों, वह समझ सकता है, कि उन बाधाओं में फंसे और उन बाधों से बोधी होने की दशा में क्या अंतर है।

फिर माता के गर्भ वाली दुनिया में रह कर और आंख नाक कान, मुंह आदि रख कर भी किसी बच्चे के लिए रूप, रस, गंध आदि का बोधी होना ही असम्भव है। इस अभिप्राय के लिए उस को वहां से निकलने और एक ऐसी दुनिया में आने वा जन्म लेने की आवश्यकता है, कि जिस के विविध प्रकार के प्रभाव उस की इन बोध दायक शक्तियों में जाग्रति पैदा करके उसे धीरे धीरे उन विविध बोधों के लाभ करने के योग्य बना दें।

प्रश्न। जब बच्चा मां के गर्भाशय को छोड़ कर इस पृथ्वी में जन्म लेता है, तब क्या होता है?

उत्तर। तब इस पृथ्वी में जन्म लेने पर यहां की वायु यहां की ज्योति, यहां के शब्द और माता वा किसी और के दूध के पीने और उस के वा किसी और के हाथों के सम्पर्श से बच्चे के आत्मा में ज्ञान वा बोध दायिनी इन्द्रियों की जाग्रति आरम्भ होती है, और समय के साथ २ ज्यों २ उस की यह जाग्रति उन्नत वा गहरी होती जाती है, त्यों २ उस की मानसिक बोध शक्तियां भी उन्नत होती जाती हैं। फिर वह धीरे २ विविध आकारों और रंगों आदि में जो अन्तर वा विभिन्नता है, उस

अन्तर वा विभिन्नता का भी बोधी बनने लगता है। इन बाधो के उत्पन्न हो जाने पर वह बहुत सी स्त्रियों के आकारों में से अपनी माता के आकार और उस के शब्द को अलग देखने और पहचानने के योग्य हो जाता है। फिर वह धीरे २ अपने शरीर के बाहर वाले कई अंगो का भी बोधी हो जाता है, अर्थात् उन्हें भी पहचानने लगता है, और तब वह इस प्रकार के प्रश्नों के पूछने पर कि बताओ तुम्हारी आँख कहाँ है अपने हाथ को उठा कर और अपनी उङ्गलियों को अपनी आखों पर रख कर बताता है कि वह यह हैं। कानों को बताता है कि वह यह हैं। नाक को बताता है कि वह यह है। जीभ निकाल कर बताता है कि वह यह है। इसी प्रकार अपने हाथों और पावों आदि के अस्तित्व के विषय में अपने बोधी हो जाने का प्रमाण देता है।

फिर जब उस की मानसिक अनुकरण शक्ति इतनी स्फूर्ति लाभ कर लेती है, कि वह अपने माता पिता आदि के शब्दों के अनुकरण करने की प्रेरणा अनुभव करने लगता है तब वह उन के शब्दों का उच्चारण सीखना और वह जिस वस्तु वा गुण आदि से सम्बंधित हो और जिन की उस पहले से पहचान न हो, उन के विषय में भी धीरे २ अवगति लाभ करना आरम्भ करता है और इस प्रकार एक वा दूसरी भाषा के शब्दों को सीख कर उनके द्वारा अपने किसी भाव के प्रकाश करने और किसी और के अभिप्राय के समझने के योग्य बनता जाता है।

इस से आगे वह वस्तुओं के तिकोन, चौकोन और गोल आदि विविध प्रकार के आकारों के विषय में भी बोधी बनता है और यदि इस के अनन्तर उस की मानसिक शिक्षा का कोई और नष्ठ और नियमित प्रबन्ध हो जाए, तो वह इस से आगे किसी

अय नापा, गणित, भूगाल, इतिहास आदि विषयक नाना बातों का सीख कर और भी अधिक ज्ञान लाभ करता है। इस स भी आग वह पदाथ विज्ञान अर्थात् विश्व के नाना पदाथ जिन भौतिक वस्तुओं क कणा स बन है, उन के सयोग और वियोग आदि विषय क विविध सत्या का ज्ञान लाभ करता है। इसी प्रकार नाना जड पदार्थों म ताप विद्युत आदि जो २ शक्तिया वतमान हैं, उन के प्रभावा और गति आदि के विषय मे ज्ञानी बनता है। इसी प्रकार वह पृथ्वी की गठन और अपन सौर मडल और उसके साथ सम्बन्ध रखन वाले नक्षत्रा और उपनक्षत्रों आदि क विषय म जो नाना सत्य हैं उन के सम्बन्ध म ज्ञानी हो सकता है। फिर इच्छुक होन पर वह जीवित आकारो की उत्पत्ति और उन्नति आदि विषया के सम्बन्ध मे भी ज्ञान वा बोध लाभ कर सकता है। इसी उन्नति के पथ म वह मानव समाज और उस म गवनमट की गठन और उस क विविध प्रकार क नियमा, शारीरिक तत्व वा चिकित्सा, ग्रह, सड़क, नहर, रेल और विविध प्रकार की बनावटा के निर्म्माण और व्यवहार आदि जिस २ विषय मे ज्ञानी होना चाहे, उस २ विषय म योग्यता रखने और अनुकूल होना पान पर ज्ञान लाभ कर सकता है। इस प्रकार के विविध बोधा की जो दुनिया है, वह एक और दुनिया है कि जो माता के गर्भाशय का पहली दुनिया से पूर्णत अलग है।

इस प्रकार क मानसिक ज्ञान वा बोधा की उन्नति जिस दरजे तक लोगो मे जितने अश अधिक होती है, उतने ही अश अधिक वह जहाँ शारीरिक सुखा के सामाना के लाभ करने और जड, पशु और उद्भिद् जगत् के बहु प्रकार के विघ्ना वा कष्टा म रक्षा पाने और भाप ताप, विद्युत आदि शक्तिया पर आधिपत्य लाभ करके उन से बडे २ उपयोगी काम लेन के योग्य होते हैं, वहा वह

साधारणत सुखार्थी होकर धन, सम्पत्ति, मान प्रशसा पद और शासन आदि के भी अनुरागी बन जाते ह। और यद्यपि स्वाधीनता और पराधीनता,अधिकार और अनाधिकार विषयक सत्य बोधो की जाग्रति वा उन्नति होने से किसी देश वा जाति की सामाजिक वा शासन प्रणाली म अवश्य कुछ न कुछ उन्नति होती है, और उस म स कई प्रकार के अत्याचारो के विरुद्ध नियम भी बनते है और उन म एक वा दूसरी सीमा तक कुछ रोक भी पैदा हो जाती है, तथापि दूसरी दुनिया म नीच अनुरागो और नीच घृणा भावो और उन से प्रसूत आत्मिक अन्धता और मिथ्या का ही बहुत बड़ा अधिकार वा राज्य रहता है।

प्रश्न। क्या इस से ऊपर कोई तीसरी दुनिया भी है ?

उत्तर। जी हा।

प्रश्न। वह कौन सी ?

उत्तर। जब किसी मनुष्य मे कोई ऐसा उच्च भाव जाग्रत हो, कि जिस की जाग्रति से उसे किसी और मनुष्य की आत्मिक उच्चता और उस की महिमा दिखाई दे अथवा किसी उपकारी के उपकारो की सुन्दर छवि नज़र आवे, और किसी स उपकार पाकर उस के सम्बन्ध म स्वार्थी रहने के स्थान म उस के उपकारो के लिए समुचित परिशोध करने का कोई भाव उत्पन्न हो, अथवा अपनी कोई आत्मिक नीचता उपलब्ध हो, और उस म नेचर के किसी विभाग के किसी अस्तित्व के शुभ के लिए ऐसा भाव उत्पन्न हो, कि जिस मे वह अपनी किसी प्रकार की सेवा वा सहाय के द्वारा उस का केवल विशुद्ध शुभ करना चाहता वा करता हो, और उस म अपनी किसी नीच वासना की किसी प्रकार की कोई तृप्ति का भाव न रखता हो,तब वह इस प्रकार के जिन उच्च

भावो का अनुरागी का लाभ करता है वह भाव दूसरी दुनिया से ऊपर एक और तीसरी दुनिया से सम्बन्ध रखते हैं, और यह तीसरी दुनिया सात्विक दुनिया कही जा सकती है। श्रद्धा, दया, कृतज्ञता, पर उपकार अनुभूति आदि विविध प्रकार से उच्च भावों की जाग्रति और उन्नति विषयक सात्विक बोधों का इसी तीसरी दुनिया से सम्बन्ध है।

प्रश्न। इस प्रकार के सात्विक बोध क्या मनुष्य जगत् में बहुत कम दिखाई देते हैं?

उत्तर। निस्सन्देह। और जिन थोड़े से मनुष्यों में इस प्रकार के कुछ बोध उत्पन्न भी हुए हैं, उन में भी ऐसों की संख्या अत्यन्त कम है कि जो नेचर के किसी जगत् के सम्बन्ध में सेवा वा उपकार विषयक किसी काम के इतने अनुरागी हों, कि वह अपने सब प्रकार के नीच अनुरागों के अधिकार से ऊपर होकर इस प्रकार के किसी उपकार विषयक काम के व्रती बन कर उमर भर उस के पूरा करने और उस के सम्बन्ध में सब प्रकार के आवश्यक त्याग करने की योग्यता रखते हों।

प्रश्न। क्या गान, वाद्य, नृत्य, चित्र अंकन सौंदर्य और विद्या विषयक अनुराग सात्विक अनुराग नहीं?

उत्तर। नहीं। जिस प्रकार शारीरिक व्यायाम वा शिल्प (कारीगरी) आदि विषयक कोई अनुराग भी सात्विक अनुराग नहीं, उसी प्रकार यह सब अनुराग भी सात्विक अनुराग नहीं हैं। जब किसी मनुष्य में किसी और के हित को मुख्य रखकर और अपने धन, मान, अपनी प्रशंसा और बड़ाई आदि नीच अनुरागों

वा प्रेरणा स रहित होकर किसी श्रौर के किसी प्रकार के हित के सम्बन्ध मे किसी भाव की प्रेरणा हो, तब केवल उस हित उत्पादक भाव को सात्विक वा उच्च भाव कहते हैं। एस किसा उच्च वा सात्विक भाव के द्वारा परिचालित होकर कोई मनुष्य जहा तक अपने तन श्रौर धन श्रादि के भिन्न अपने शिल्प, गान वा वाद्य, वा नृत्य श्रादि किसी गुण वा अपना बुद्धि वा विचार शक्ति श्रादि को परहित साधन के लिए अर्पण कर सकता हो, वहा तक उस इस हित साधन मे उस के यह गुण उपाय वा जरिया अवश्य बन सकते हैं वस ही उसका आत्मिक हित भी कर सकते हैं, परन्तु इस प्रकार का कोई गुण वा गुण विषयक अनुराग आप कोई सात्विक वा उच्च भाव नही।

प्रश्न। यदि कोई मनुष्य नेचर के किसी विभाग के सम्बन्ध म सत्य ज्ञान का अनुरागी होकर उसकी खोज मे लगा रह, श्रौर वह अपने एस परिश्रम श्रादि स जो २ सत्य ज्ञान लाभ कर, उस लिपिबद्ध करके जन समाज की अवगति श्रौर उस म विज्ञान की उन्नति की मुख्य रख कर दान कर जाए श्रौर उस के बदले म धन वा मान श्रादि किसी वासना को मुख्य न रखे तो उस का एसा भाव क्या सात्विक भाव कहा जा सकता है?

उत्तर। निस्सन्देह। सात्विक भाव की जो तारीफ पहले बता दी गई है, उस के अनुसार किसी मनुष्य म जो कोई भाव भी वर्तमान हो वह भाव अवश्य सात्विक वा उच्च भाव है।

प्रश्न। क्या इस तीसरी अर्थात् सात्विक भाव सम्बन्धी दुनिया स ऊपर भी किसी श्रौर प्रकार के भावो की कोई दुनिया है?

उत्तर। जी हा। मनुष्य जगत् के विकास म जब किसी ऐस

आत्मा का आविर्भाव हो, कि जो कुछ ऐसी विशेष शक्तियों का बीज रूप में लेकर प्रगट हुआ हो, कि जिन्हें विकसित करके वह एक ओर उन नीच अनुराग और घृणा विषयक सब प्रकार की पतन कारी शक्तियों में से किसी भी शक्ति का दास न हो, कि जो दूसरी और तीसरी दुनिया के मनुष्यों में पाई जाती हैं, और दूसरी ओर उन के अधीन आत्माओं की उन की योग्यता के अनुसार उन से मोक्ष देने, और जो किसी सात्विक भाव से शून्य हो, परन्तु उस की उन में जाग्रति और उन्नति सम्भव हो, उन में ऐसे किसी बोध को जाग्रत और उन्नत करने की सामर्थ्य रखता हो, और जो जन आत्मिक अबोधता वा अज्ञान में ग्रस्त हो, उन की योग्यता के अनुसार उन में आत्मा सम्बन्धी सत्य बोध वा ज्ञान के उत्पन्न और उन के भीतर के मिथ्यापन को नष्ट करने की भी सामर्थ्य रखता हो, तब वह इन पुराने नई शक्तियों के विचार से मनुष्य जगत् में जिस नए लोक का प्रकाश और उस में आप वास करता है, वह सात्विक दुनिया से ऊपर चौथी दुनिया होती है। देवात्मा का आविर्भाव इसी दुनिया का प्रकाशक है। इसी दुनिया में आविर्भूत होकर उन्हों ने अपनी देव शक्तियों के विकास में देव ज्योति को लाभ करके आत्मा के गठन प्राप्त रूप, उस के रोगों और पतन और विनाश और इस पतन से उसके मोक्ष और उसके विकास के विषय में जिन मूल सत्यों वा तत्वों को देखा और प्रगट किया है, उन्हें उन से पहले कोई जन उस देव ज्योति से विहीन होने के कारण देख और प्रगट नहीं कर सका था। इसीलिए उन के आविर्भाव से पहले धर्म्म विषयक मूल तत्वों वा उन के सत्य ज्ञान के विचार से सारा मनुष्य जगत् अन्धकार वा अबोधता की अवस्था में था। अब जब तक कोई मनुष्य अपने

आत्मा के अस्तित्व और उस की गठन और उस के रोगो, उस के पतन और विनाश और विकास विषयक विविध सत्या के देखन और उपलब्ध करने के योग्य न हो, तब तब वह अपने आत्मिक अस्तित्व विषयक उपरोक्त नाना बाबा के विचार से उसी प्रकार अबोधी वा बेसुध वा बेहोश रहता है, जिस प्रकार एक २ मनुष्य अपनी शिशुपन की दशा मे जीवित शरीर रख कर भी उस के अस्तित्व और उस की गठन और उसके रोगो और उस की स्वास्थ्य आदि के सम्बन्ध मे जो नाना सत्य है, उन के देखने और जानने के विचार से पूणत अज्ञानी, अबोधी, बेसुध वा बेहोश रहता है ।

चौथा परिच्छेद ।

आत्मिक पतन के महा भयानक फल ।

प्रश्न । पतनकारी गतियों को ग्रहण करके मनुष्य नेचर के नियमानुसार किन २ फलों को प्राप्त होता है ?

उत्तर । अपने विविध पतनकारी कारणों से लाखों और करोड़ों मनुष्य जिस २ प्रकार की नीच गतियां ग्रहण करके उन के द्वारा नेचर के अटल नियम के अनुसार जिस २ प्रकार के महा भयानक फल पाते हैं, वह यह हैं —

१—शारीरिक विविध रोगों की उत्पत्ति और उन के द्वारा विविध कष्ट और पीड़ाएं और कई समयों में अकाल और अपमृत्यु ।

ऐसे पतित लोग असंयमी बन कर अपने शरीर में नाना प्रकार के रोगों की उत्पत्ति करते हैं, जिन में से कितने ही जन उन महा भयानक रोगों में भी ग्रस्त हो जाते हैं, और उनके कारण अत्यंत कष्ट पाते और हानि उठाते हैं कि जो गंदे रोग कहलाते हैं, और जिन गंदे रोगों के विषय में केवल उन्हीं का अस्तित्व विनाशक नहीं बनता, किंतु कितनी ही दशाओं में उन के जोड़ और उन की संतान तक को भी उन के भयानक फल भुगतने पड़ते हैं। इस प्रकार के गंदे रोगों के भिन्न वह असंयमी बन कर अपने शरीर में विविध प्रकार के और जिन रोगों और दुर्बलता की उत्पत्ति

करते हैं,उनके द्वारा भी वह आत्मिक और कई प्रकार की हानिया के भिन्न तरह २ की यन्त्रणा और तरह २ का दुःख और कष्ट पाते और भोगते हैं, और कई दशाओं में अकाल वा अपमृत्यु को भी प्राप्त होते हैं।

२—विविध प्रकार का दासत्व और उस के द्वारा विविध प्रकार की भयानक यन्त्रणाए और अन्य हानिया ।

(१) ऐसे पतित लोग अपने नाना पारिवारिक सम्बन्धियों के दास बन जाते हैं, जिस से

(अ) वह उन में से एक वा दूसरे के वियोग में अपने इस दासत्व की गहराई के अनुसार बहुत हार्दिक आघात् और कष्ट पाते हैं-यहां तक कि कितने ही जन इस प्रकार के दारुण और हृदय विदारक दुखों में पड कर और उन के कारण रो २ कर अपनी आंखों की दृष्टि शक्ति को खो बैठते हैं कितने ही जन पागल हो जाते हैं, अथवा किसी और प्रकार से अपनी स्वास्थ्य नष्ट कर लेते हैं और घुन २ कर समय से पहले ही मर जाते हैं, अथवा इस से भी बढकर उस के सहन की शक्ति न रखने पर आत्म हत्या करके अकाल और अपमृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं।

(इ) वह उन में से किसी जन से कई प्रकार के अत्याचार और कई प्रकार की शारीरिक और आत्मिक

ट्रानिया पावर भी उन से अपना सम्बन्ध घाट कर अपना रक्षा नहीं कर सकते।

(२) वह धन या अपनी जायदाद के दास बन जाते हैं, जिस से

(अ) वह उस के चले जाने से अपने २ दासत्व की गहराई के अनुसार बहुत आघात् लाभ करते हैं और ऐसी दशा में बहुत बेचनी और यन्त्रणा भोग करते हैं और कितने ही जो किसी ऐसी यन्त्रणा के सहन के योग्य न होने पर अपने शरीर की हत्या तक कर लेते हैं, और अकाल मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं।

(इ) वह यह जान कर भी कि यदि वह अपने धन वा अपनी सम्पत्ति वा जायदाद को परोपकार सम्बन्धी किसी काम के लिए दान करें, तो ऐसे दान से अपने आत्मा और नचर के अन्य अस्तित्वों का सच्चा हित साधन कर के उस के विकास कारी नियम का एक सीमा तक साथ दे सकते हैं, उस किसी परोपकार विषयक उच्च कार्य के लिए दान करने की सामर्थ्य को पूर्णत वा बहुत कुछ खो बैठते हैं।

(३) वह अपनी इज्जत के दास बन जाते हैं, जिस से,

(अ) वह उस के चले जाने के भय से कई बार किसी भली क्रिया को भली क्रिया जान कर भी उसे पूरा नहीं कर सकते, किन्तु उस के विपरीत एक वा

दूसरी बुरी क्रिया के करने के लिए मजबूर होते हैं।

(इ) वह उनके पास जाने पर अपने दोगरेर की गहराई के अनुसार बहुत हार्दिक आघात् और कष्ट पाते हैं, यहां तक कि कितने हो जन उन के पास जाने से इतनी हार्दिक यन्त्रणा पाते हैं कि फिर उस के सहने के योग्य न होने पर वह अपने शरीर की हत्या तक कर लेते है, अथवा उस से घुन घुन कर कुछ काल में मर जाते हैं।

(४) वह अपने तन के दास बन जाते हैं जिस से,

(अ) वह उस समय में बहुत कष्ट भोगते हैं जब कि उन्हें किसी कारण से उस के किसी सुख से वंचित होना पड़ता है अथवा जब वह अपने किसी नीच सुख की हानियां को भला भांति जान कर और उस से उद्धार पाने के लिए एक २ समय में आकांक्षा होकर भी उस से निकल नहीं सकते।

(इ) वह यह जान कर भी कि यदि वह अपने तन के द्वारा पर तथा विषयक कोई काम करें, तो उस से उन के आत्माओं और उन के साथ २ उन के शरीरों का भी भला हो सकता है, तो भी वह उस परोपकार विषयक किसी शुभ काम में लगाने की सामर्थ्य को पूर्णतः या बहुत कुछ खो बैठते हैं।

३—उलटी दृष्टि और उस के भयानक फल ।

ऐसे पतित लोग अपने आत्माओं में उलटी दृष्टि के भयानक रोगों की उत्पत्ति करते हैं, जिस से,

(अ) वह एक वा दूसरे विषय में कितने जनों की तुलना में हीन होकर भी केवल यही नहीं कि उन की अपेक्षा अपने आप को हीन नहीं देखते, किन्तु उलटा बड़ा देखते हैं, और एक वा दूसरे समय में उन की अपेक्षा अपने आप को बड़ा प्रगट करते हैं।

(इ) वह अपनी किसी नीच गति वा अपनी किसी पतन उत्पादक परन्तु सुख वा तृप्ति दायक क्रिया के सम्बन्ध में, क्रिया को कुत्सित वा बुरे रूप में नहीं देखते, किन्तु उस के उलट उसे सुन्दर और मनोहर रूप में देखते हैं।

(उ) वह क्या अपनी और क्या किसी अन्य जन की (जिस के साथ वह किसी भी नीच अनुराग के बन्धन से बन्धे हुए हों) किसी सच्ची हीनता वा नीच क्रिया के विषय में अपने किसी सच्चे हितैषी से भी प्रतिवाद वा तिरस्कार वा असंतोष वा घृणा सूचक कोई बात वा उपदेश सुनकर उस मित्र के स्थान में शत्रु के रूप में देखते हैं, और जो जन उन की अथवा उस की (जिस के साथ वह किसी नीच अनुराग के बन्धन से बन्धे हुए हों) किसी ऐसी नीच क्रिया की पोषकता करते

हो उन्हें शत्रु के स्थान में मित्र के रूप में देखते हैं।

(ऊ) वह अपने नाना मिथ्या संस्कारों वा मिथ्या विश्वासों वा मिथ्या के स्थान में सत्य रूप में देखने के कारण धर्म के नाम से ऐसी पूजाएं वा प्रार्थनाएं और ऐसे पाठ वा जप वा अन्य साधन अनुष्ठान, त्याग और अन्य नाना प्रकार की क्रियाएं करते हैं कि जिन के द्वारा केवल यही नहीं, कि उनके आत्माओं का कोई हित नहीं होता, किन्तु अन्य कई प्रकार की शोचनीय हानियों के भिन्न उन के आत्माओं का एक वा दूसरे प्रकार में अहित भी अवश्य होता है।

४—आत्मा की विकृति और उस की महा शोचनीय मृत्यु।

ऐसे पतित लोग अपनी नाना प्रकार की पतन उत्पादक चिन्ताओं और क्रियाओं में अपने २ आत्माओं को दिन दिन मैला, कठोर, कुत्सित और दुर्बल अर्थात् विकृत बनाते हैं जिस से

(अ) वह अपने शरीर में उच्च कोटि के सूक्ष्म मनों के बनाने की योग्यता को क्रमशः खोते रहते हैं और अपने स्थूल शरीर के त्याग करने पर अनुकूल दशा में भी बहुत घटिया दर्जे के सूक्ष्म शरीर निर्माण करते हैं।

(ई) वह अपने जिस २ अङ्ग के द्वारा अपेक्षाकृत बहुत अधिक पर हानि वा पाप करते हैं,

उस व बरत रखने से वह उस अङ्ग के सम्बध म सूक्ष्म मेला व बनाने की योग्यता को पूणत वा बहुत कुछ खो देते हैं, और इसीलिए स्थूल शरीर के त्याग करन पर जब वह अनुकूल दशा में भी अपन लिए सूक्ष्म शरीर निर्म्माण करते हैं तब उस व एक वा दूसर अग के लिए सूक्ष्म सत्ता व पूणत वा यथष्ट मात्रा म न मिलन पर वह आंख, नाक, कान, जिह्वा, हाथ, पाव और जनन क्रिया आदि म से किसी एक वा दूसर अग को पूणत नही बना सकते वा केवल अपूर्ण रूप म निर्म्माण करते हैं। इसलिए इस प्रकार के एक वा दूसरे अग की हीनता वा उस के अपूर्ण रूप से बनने क कारण भी वह कई प्रकार क दुख और कष्ट भोग करते हैं।

(उ) वह अपनी नीच गतियो स मोक्ष पाने और अपने आत्मा की निर्म्माणकारी शक्ति व विकसित करने की योग्यता को (यदि इस प्रकार की कोई जन्म जात योग्यता उन्हे पहले से मिली हो) दिना दिन खोते रहते हैं।

(ऊ) वह जब अपने आत्मा की निर्म्माणकारी शक्ति को दिना दिन क्षय करते २ उसे पूणत नष्ट कर देते ह, तब वह अपने जीवित अस्तित्व के विचार से आप भी पूणत नष्ट हो जाते ह।

यह यह सब सच्चे महा भयानक और महा शोचनीय फल हैं, जो उन नचर के घटन नियमानुसार प्रत्येक उस जन को मिलते हैं, और जिन के मिलने में किसी जन के लिए भी काई और किसी प्रकार की कुछ भी रियायत नहीं होती चाहे वह इस दुनिया में कोई भी धर्म मत वा विश्वास रखता हो और चाहे धर्म के मज़हब के नाम से बाहर से कोई क्रिया वा अनुष्ठान करता हो और कोई भी आडम्बर वा वेष भूषा वा रहन सहन रखता हो कि जो अपने नीच अनुरागों और अपनी नीच घृणाओं या पतन कारी शक्तियों का दास हो, वह नचर जो इन पतनकारी शक्तियों से मोक्ष पाने की जो सच्ची विधि है उस का एक और ज्ञान न रखता हो, वा ऐसा ज्ञान लाभ करना न चाहता हो और दूसरी ओर ऐसा ज्ञान पाने पर भी उन से मोक्ष पाने के निमित्त उस जिन सच्चे और सर्व्वोच्च मोक्ष दायक प्रभावों के लाभ करने और उनके द्वारा अपने आत्मा में शुभ परिवर्तन की उत्पत्ति की आवश्यकता है, उस के लिए कोई योग्यता न रखता हो वा यदि पहले वह कभी ऐसी योग्यता रखता था तो फिर उस खो चुका हो।

चौथा अध्याय।

मनुष्य के सम्बन्ध में चौथा महातत्व।

पहला परिच्छेद।

आत्मा की पतनकारी गतियों से सत्य मोक्ष की विधि और उसकी मोक्ष के विषय में नाना धर्म्म सम्प्रदायों की नाना मिथ्या गप्पें।

प्रश्न। श्री देवगुरु भगवान् ने मनुष्य के सम्बन्ध में जो चौथा महा तत्व प्रगट किया है, वह क्या है?

उत्तर। वह यह है कि,

जहां तक कोई मनुष्य एक ओर अपने आत्मा के पतनकारी कारणों के सम्बन्ध में सत्य ज्ञान लाभ करने और उन से और उन के विकारों से मोक्ष पाने, और दूसरी ओर इस से भी आगे अपने आत्मा की निर्म्माणकारी शक्ति को उच्च भावों वा अनुरागों की प्राप्ति के द्वारा विकसित करने के योग्य होता है, वहां तक ही वह उच्च कोटि के सूक्ष्म सेलों के बनाने और अपने स्थूल शरीर के त्याग करने पर उच्च कोटि के सूक्ष्म शरीर के निर्म्माण करने और किसी उच्च लोक में पहुंचने

और वास करने अथवा वहां में और उन्नत ज्ञान की योग्यता रखने पर उन की अपेक्षा भी और उच्च लोकों में पहुचने और वास करने का अधिकारी बनता है और नेचर के परम हितकर विकासकारी नियम के पूरा करने और परम एकता के आदर्श को और चलने मे सफलता लाभ करता है।

प्रश्न। पतनकारी कारणों से मोक्ष पाना क्या होता है?

उत्तर। इस से पहले आत्मा के जो २ पतनकारी कारण बताए जा चुके हैं उन में उद्धार वा मुक्ति पाने और उन के महा हानिकारक फलों से बचने के योग्य होना पतनकारी कारणों से मोक्ष पाना कहलाता है।

प्रश्न। वह किस तरह?

उत्तर। (१) अपने आत्मा के विविध प्रकार के पतन-कारी नीच अनुरागों में से किसी भी नीच अनुराग को उस के पतनकारी वा हानिकारक रूप में देखने और उस के विषय मे सब प्रकार के अन्धकार वा अज्ञान वा मिथ्या विश्वासों वा कुसंस्कारों से उद्धार और सत्य ज्ञान पाने के लिए जिस आत्म तिमिर नाशक और सत्य आत्म रूप प्रकाशक सर्व्वोच्च वा सर्व्व श्रेष्ठ ज्योति की आवश्यकता है, उस के लाभ करने का शुभ अवसर पाना

(२) अपने आत्मा की विविध प्रकार की पतनकारी नीच घृणाओं में से किसी भी नीच घृणा को उस के पतनकारी वा हानिकारक रूप में देखने और उस के विषय में सब प्रकार के अन्धकार वा अज्ञान वा मिथ्या विश्वासों वा कुसंस्कारों से उद्धार और सत्य ज्ञान पाने के लिए जिस आत्म तिमिर

नाशक और आत्म रूप प्रकाशक सर्वोच्च वा सब श्रेष्ठ ज्योति की आवश्यकता है, उस के लाभ करने का शुभ अवसर पाना,

(३) अपने आत्मा के किसी भी पतनकारी वा नीच अनुराग को उस के पतनकारी वा हानिकारक रूप में देखने के अनन्तर उस के अधिकार और विकारों से हानि परिशोध के द्वारा जहां तक सम्भव हो, मोक्ष पाने के निमित्त उस के प्रति जिस उच्च घृणा और उच्च दुख उत्पादक सर्वोच्च और सर्व श्रेष्ठ तेज की आवश्यकता है, उस के लाभ करने का अवसर पाना

(४) अपने आत्मा की किसी भी नीच वा पतनकारी घृणा को उस के पतन वा हानिकारक रूप में देखने के अनन्तर उस के अधिकार और विकारों से हानि परिशोध के द्वारा जहां तक सम्भव हो, मोक्ष पाने के निमित्त जिस उच्च घृणा और उच्च दुख उत्पादक सर्वोच्च और सर्व श्रेष्ठ तेज की आवश्यकता है, उस के लाभ करने का अवसर पाना,

आत्मा की सत्य मोक्ष के विषय में सत्य नेचर की ओर से यह सत्य विधि है, कि जिस का प्रकाश देवात्मा ने किया है, और जिस का प्रकाश उन से पहले कभी किसी और ने नहीं किया था, क्योंकि उन से पहले कोई भी चाहे वह ईश्वर वा परमेश्वर वा प्रभु वा महाप्रभु वा महात्मा वा मुनि वा ऋषि वा बुद्ध वा तीर्थङ्कर वा गुरु वा पीर वा पगम्बर वा कोई देवी वा देवता वा वली आदि भी कहलाता रहा हो, उन देव शक्तियों से विभूषित नहीं था, कि जिन के विकसित होने से आत्मा में इस आत्म तिमिर नाशक और आत्म रूप और आत्म रोग और आत्म पतन और आत्म विकास विषयक सत्य ज्ञान प्रकाशक सर्वोच्च वा सब श्रेष्ठ

ज्योति, और नीच अनुराग और नीच घृणा भाव नाशक और उच्च अनुराग और उच्च घृणा उत्पादक सर्वोच्च वा सर्व्व श्रेष्ठ तेज की उत्पत्ति और उन्नति होती है। हा इस सर्वोच्च ज्योति और सर्वोच्च तेज से उन में से कोई कल्पित अस्तित्व तो नहीं रहा, जो सच्चा अस्तित्व भी रखता था, वह भी पूर्ण शून्य था।

प्रश्न। आप इस संचर की विधि की कुछ थोड़ा सी और व्याख्या करके मुझे कुछ और अधिक समझा सकते हैं?

उत्तर। बहुत। क्योंकि यह अटल नियम है, कि *मनुष्य अपने शरीर में जो अंग नहीं रखता उस अंग का जो कार्य्य* होता है, उसे भी वह दिखा वा पूरा नहीं कर सकता—यथा, जो जन आँखें नहीं रखता अर्थात् अंधा होता है, वह उन के द्वारा किसी किताब को नहीं पढ़ सकता और किसी फूल वा कपड़े के रंग को आप देख कर नहीं बता सकता, अथवा जो जन आँख रखता है, परन्तु उनके द्वारा किसी रूप वा रंग के देखने के निमित्त उसे जिस ज्योति वा रोशनी की जरूरत है, वह ज्योति वा रोशनी जब वर्तमान नहीं होती, तब वह आँखें रखकर भी किसी पुस्तक के अक्षर नहीं देख सकता, और इसीलिए उन के द्वारा किसी पुस्तक को नहीं पढ़ सकता, और अंधकार में किसी फूल वा कपड़े के रंग को भी नहीं देख सकता, और उस का ज्ञान लाभ नहीं कर सकता, इसी प्रकार सूक्ष्म आत्मा के सूक्ष्म रूप और उस के पतनकारी कारणों और उन से मोक्ष और उस के विकास विषयक जिन सूक्ष्म सत्यों के देखने के लिए जिस सर्व्वोच्च और सर्व्व श्रेष्ठ सूक्ष्म ज्योति की आवश्यकता है, और उस ज्योति की उत्पत्ति और उन्नति किसी आत्मा में जिन सर्व्वोच्च और सर्व्व श्रेष्ठ

शक्तियों की उत्पत्ति और उन्नति से ही होती है, उस से पृथक् होकर कभी कोई जन आत्मा के विषय में कोई सत्य ज्ञान लाभ नहीं कर सकता, कि जो देवात्मा ने लाभ किया, और जिन का उन्हों ने उपदेश दिया है।

फिर नेचर का एक और अटल नियम यह है, कि जब कोई शक्ति, गति अर्थात् क्रिया की हालत में हो, तब जब तक उस की उस गति में कोई और शक्ति रोक उत्पन्न करके उस पूर्णतः बन्द न कर दे, तब तक उस की वह गति जारी रहती है, यथा यदि तुम अपनी घड़ी में चाबी लगाकर और उस के द्वारा उस में अपनी शक्ति पहुँचा कर उसमें गति उत्पन्न कर दो, अथवा किसी गेंद को अपने हाथ के बल से फेंक कर और उस में अपने बल को पहुँचा कर गति पैदा कर दो, तो उन में से किसी की गति भी उस समय तक कभी बन्द न होगी, जब तक किसी और शक्ति वा शक्तियों की गति से उस में रोक पहुंचने पर उन का वह बल घटते २ पूर्णतः नष्ट न हो जाय। नेचर के इसी अटल नियमानुसार मनुष्य अपने जिस किसी नीच अनुराग वा अपनी जिस किसी नीच घृणा शक्ति से प्रेरित वा परिचालित होकर कोई गति अर्थात् चिन्ता वा क्रिया करके उस के द्वारा कोई सुख वा रस वा तृप्ति वा तुष्टि पाता है, और ऐसी किसी चिन्ता वा क्रिया के प्रति अपने हृदय में कोई घृणा वा उसे करके, अपने हृदय में उस के कारण कोई दुख वा कष्ट वा यन्त्रणा अनुभव नहीं करता, उस से चाहे उस के आत्मा और चाहे उस के शरीर और चाहे उस के पारिवारिक वा किसी अन्य जन वा किसी पशु वा किसी भी जीवित वा अजीवित अस्तित्व का कैसा ही अहित वा उस की कैसी ही हानि होती हो, उसको उस कोई परवाह

नहीं होती, और वह उस के करने से टर नहीं सकता, क्योंकि वह जब तक अपना किसी नीच वा पतनकारी शक्ति के अधीन होता वा रहता है, तब तक उस के द्वारा उस में परिचालित होना और अशुभ वा पतनकारी चिन्ताएं वा अन्य क्रियाएं करना अनिवार्य्य है और जब तक उस के आत्मा में उस पतनकारी शक्ति के प्रति कोई उच्च घृणा वा उच्च दुख उत्पन्न करने के लिए ऐसी तेज शक्ति न पहुंचे, कि जिस के द्वारा उसकी वह पतनकारी शक्ति नष्ट हो जावे, तब तक वह नेचर के अटल नियम के अनुसार अपने पतनकारी पथ में अपनी रक्षा नहीं कर सकता, और उस से और उस के बुरे फलों से सच्ची मोक्ष नहीं पा सकता। इसलिए नेचर के इन अटल नियमों और आत्मा के गठन प्राप्त रूप और उस के बनने और बिगड़ने के विषय में सत्य ज्ञान से अन्धे रहने के कारण दुनिया के नाना सम्प्रदायों के सस्थापकों वा प्रचारकों ने नाना प्रकार की मिथ्या गप्पें घड़ी और फैलाई हैं और उन के द्वारा उन्हों ने मनुष्य जगत् में मिथ्या धर्म्म विश्वासों वा मिथ्या धर्म्म मतों का महा हानिकारक प्रचार किया है।

प्रश्न। ठीक है। ऐसा मोक्ष विषयक सत्य शिक्षा तो देवात्मा के भिन्न किसी और ने नहीं दी।

उत्तर। जी हां, किसी और ने नहीं दी क्योंकि उन के आविर्भाव से पहले जो लोग आप आत्मिक अन्धकार में ग्रस्त थे उन के लिए जब इस प्रकार की सत्य शिक्षा देना पहले असम्भव था, बस ह्रो उन के आविर्भाव के अनन्तर अब भी जो लोग आप आत्मिक अन्धकार में ग्रस्त हैं उन के लिए भी ऐसी सत्य शिक्षा देना असम्भव है। हां, मनुष्य तो एक ओर यह सत्य शिक्षा किसी

वहलाने वाले सच्चा पुरुष न भी कभी और कहीं नहीं दी ।

प्रश्न । इस पुस्तक में महात्मा की त्रय शिक्षा के विरुद्ध मोक्ष के विषय में जिस प्रकार की अयथार्थ बातें या पुराने मिथ्या गल्प प्रचलित हुए हैं, उन का आप मुझे कुछ ज्ञान दे सकते हैं ?

उत्तर । निश्चय । जब इस पृथ्वी में पशु जगत् में से मनुष्य प्रगट हुआ, तब वह अन्य पशुओं से अपनी कुछ उन्नत शील मानसिक शक्तियों को बीज रूप में पाने के भिन्न, अपने अन्य नाना भावों के विचार में प्राय पशुओं की ही न्याई था । और जिस प्रकार पशु जगत् के लाखों जीव कई प्रकार के सुख दुख अनुभव करते हैं उसी प्रकार वह अनुभव करता था, और वह अब भी अनुभव करता है । वह उन को यदि सुख अनुभव करने पर उस के लिए आकर्षण या अनुराग अनुभव करता था और दुख अनुभव करने पर उस के प्रति विकर्षण अनुभव करके उससे निवृत्ति चाहता था । परन्तु जब मनुष्य अपनी उन्नत शील मानसिक शक्तियों के कारण पशुओं की अपेक्षा अधिक सोच विचार करने के योग्य बन गया, तब वह एक या दूसरे प्रकार के किसी दुख में ग्रस्त हो जाने पर उस से निवृत्ति या मुक्ति पाने के सम्बन्ध में पशुओं की अपेक्षा अधिक उपाय सोचने या कल्पना करने के योग्य हो गया । इसीलिए भारत वर्ष के 'वैदिक काल' में इस प्रकार के कुछ लोग जो उस समय के कई और लोगों की अपेक्षा अधिक सोचने या कल्पना करने वाले थे, और जो उस काल में "ऋषि" या 'मुनि' कहलाते थे, उन्हों ने कई प्रकार के दुखों को अनुभव करने पर उन्हें अपने उस समय के विचार के अनुसार तीन भागों में विभक्त करके उन का नाम 'त्रिताप' रक्खा था । फिर उन तीनों प्रकार के

नापों से क्योंकर मुक्ति हो, उस के विषय में उन्होंने जो उपाय सोचा था, वह इस प्रकार का था —

त्रिताप से मुक्ति ।

त्रिताप क्या है ? तीन प्रकार का ताप या दुख । यथा —

(१) आध्यात्मिक दुख—अर्थात् वह सब दुख जो किसी मनुष्य को अपने शरीर के विविध रोगों और किसी अभिलषित वस्तु के न मिलने या किसी प्रिय वस्तु के वियोग से मिलते हैं ।

(२) आधिभौतिक दुख—अर्थात् वह सब प्रकार के दुख जो किसी मनुष्य को किसी अन्य मनुष्य या पशु आदि की ओर से किसी आघात् के पहुचने या चोट के लगने या काटने या डक लगाने आदि से मिलते हैं ।

(३) आधिदैविक दुख—अर्थात् वह सब दुख जो मनुष्य को गर्मी, सर्दी वारिश आदि प्रतिकूल ऋतुओं के द्वारा मिलते हैं ।

इन तीनों प्रकार के दुखों से मोक्ष पाने के लिए उन्होंने यह उपाय सोचा कि यदि कोई मनुष्य इस प्रकार की चिन्ता या अभ्यास करे कि मुझे जिस शरीर के द्वारा यह सब दुख मिलते हैं मैं वह शरीर नहीं हू, किन्तु आत्मा हू और मैं अज्ञान वश अपने आप को शरीर समझता हू, और मुझे शरीर के द्वारा जो कुछ सुख वा दुख पहुँचता है उस से मैं इस अज्ञान के कारण ही सुखी वा दुखी होता हू, तो इस अभ्यास और "ज्ञान" के हो जाने पर वह नाना प्रकार के दुखों से मुक्त हो सकता है ।

इस प्रकार के दुखों से मोक्ष के सम्बन्ध में मिथ्याकल्पना के धन्य वान ऋषि केवल यही नहीं, कि आत्मा के पतनकारी कारणों और उन से मोक्ष का सत्य विधि के विचार से पूर्णतः अन्धकार वा अज्ञान की दशा में थे, किन्तु शरीर सम्बन्धी विविध रोगों और किसी मनुष्य वा पशु आदि की ओर से घायल वा जखमी होने वा किसी विषधर जीव के काटने आदि से मनुष्य में जिन दुखों की उत्पत्ति होती है, उन से बचने की जो उन्हों ने उपरावक विधि बताई, उस के विचार में भी वह बहुत कुछ भ्रान्ति की दशा में थे।

भ्रम अथवा माया से मुक्ति।

उस के बाद सुखों और दुखों के सम्बन्ध में नाना उपनिषद् कारों ने यह मिथ्या कल्पना की, कि जिस संसार में रहकर मनुष्य अपने आप को कभी सुखी और कभी दुखी अनुभव करता है, वह संसार ही केवल भ्रम मात्र है। वास्तव में "एक मेवा द्वितीय ब्रह्म" के भिन्न और कुछ भी सत् नहीं। वह ब्रह्म चित् स्वरूप, निर्लेप, निर्विकार और अकर्ता है। मनुष्य वा आत्मा वास्तव में वही ब्रह्म है, और वह केवल माया अथवा भ्रम के वशीभूत होकर अपने आप को बंधुवा और दुखी अनुभव करता है। योग विषयक साधना से उस का यह अज्ञान दूर हो सकता है। तब वह इन महा वाक्यों के अनुसार कि 'अहंब्रह्मास्मि" (मैं ही ब्रह्म हूं) 'अयमात्मा ब्रह्म (यह आत्मा ब्रह्म है) अपने रूप के विषय में "तत्व ज्ञान" और माया से मुक्ति पाकर पूर्ण आनन्द स्वरूप बन सकता है। उन की इस प्रकार की कल्पना का नाम ही "वेदान्त मत" है। उन की यह कल्पना भी पूर्णतः

सत्या है।

नरक और पुनर्जन्म के दुखों से मुक्ति।

फिर यह मिथ्या कल्पना प्रचलित की गई, कि आकाश में एक वा दूसरे देवता ने दो स्थान ऐसे बनाए हैं, कि जिन में से एक को उस ने पूर्ण सुखों का स्थान बनाया है कि जिस का नाम "स्वर्ग" वा "वैकुण्ठ" आदि है, और दूसरे को उस ने पूर्ण दुःखों का स्थान बनाया है, और उस का नाम 'नरक' है। जब कोई मनुष्य मरता है तब वह मरने के अनन्तर उस देवता के पास जाकर उस के फैसले के द्वारा अथवा अपने कर्मों के ही स्वाभाविक फलों के कारण उन में से एक वा दूसरे में किसी विशेष काल के लिए जाता है, अर्थात् वह अपने बुरे कर्मों के बदले दुःखों को भोगने के लिए नरक में और भले कर्मों के बदले सुखों के भोगने के लिए "स्वर्ग" में वास करता है। फिर जब उस में रहने की उस की मियाद खतम हो जाती है तब फिर वह इस पृथ्वी में किसी मनुष्य वा पशु वा वृक्ष के रूप में जन्म लेता है और जब तक उस की सब प्रकार के बुरे और भले कर्मों से मुक्ति न हो तब तक वह "पुनर्जन्म" के इसी चक्र में पड़ा रहता है और उससे मुक्ति नहीं पाता। भले कर्मों के फलों से कभी वह मनुष्य बन कर धन पदार्थ रत्न सवारी सुस्वादु भोजन, आरोग्यता, सुन्दर स्त्रियां और सन्तान् आदि विषयक सुख लाभ करता है और बुरे कर्मों से इन सुखों में पूर्णतः वा अंशतः वंचित होकर कई प्रकार के दुःख पाता है। इसलिए भले और बुरे दोनों प्रकार के कर्मों से मुक्त होने के बिना पुनर्जन्म के दुःखों से मुक्ति नहीं हो सकती। किसी साधन के द्वारा "आत्मज्ञान" वा "ब्रह्मज्ञान" के प्राप्त होने पर ऐसी मुक्ति मिल जाती है।

"पुनजन्म" से स्नान के द्वारा मुक्ति ।

किसी विशेष नदी कुण्ड झील, सरोवर, बावड़ी वा भरन आदि में स्नान करने से शरीर की मल के साथ सब मनुष्यात्मा के सब पाप भी धुल जाते हैं और फिर उन के लिए उसे "पुनजन्म नहीं लेना पड़ता । और तब वह 'ब्रह्म' नामक एक सर्वव्यापी चेतन सत्ता में लय वा लीन हो जाता है ।

पुनजन्म से दर्शन के द्वारा मुक्ति ।

किसी विशेष स्थान की किसी मूर्ति आदि के दर्शन से सब प्रकार पाप के कर्मों के फलों और पुनजन्म से मोक्ष मिल जाती है ।

पुनजन्म से चिह्न धारण के द्वारा मुक्ति ।

शरीर के ऊपर विशेष प्रकार के चिह्न यथा कण्ठी, तिलक कण्ठी माला छाप, मुद्रा आदि के धारण करने से भी सब प्रकार के पापों और उन के फलों और पुनजन्म से मुक्ति मिल जाती है ।

पुनजन्म से किसी विशेष स्थान में मरने के द्वारा मुक्ति ।

किसी विशेष स्थान यथा काशी आदि में मरने से भी पुनजन्म से मुक्ति मिल जाती है ।

पुनजन्म से किसी मंत्र वा शब्द उच्चारण के द्वारा मुक्ति ।

किसी विशेष मंत्र के जप वा अपने इष्ट देव के विशेष नाम के उच्चारण करने से भी पुनजन्म से मुक्ति मिल जाती है ।

पुनर्जन्म मे "बलि' के द्वारा मुक्ति।

एक वा दूसरे देवता वा देवी को कई प्रकार के पशुओं का बलि देने से भी पुनजन्म मे मुक्ति मिल जाती है। यथा —

कालिका पुराण मे लिखा है —

पक्षिण कच्छपा ग्राहा मत्स्या नवविधा मृगा
महिषा गोधिका गाव छागो वभ्रश्च शूकर।
खड्गश्च कृष्ण सारश्च गोधिका सरभा हरि
शार्दूलश्च नरश्चैवस्वगात्र रुधिरन्तथा।
चण्डिका भैरवादिना वलय परिकीर्त्तिता
बलिभि साध्यते मुक्ति बलिभि साध्यते दिवम्।

भावार्थ —

पक्षी, कछुवा, मगर, मछली नौ प्रकार के हिरन, भैसा नीलगाय, गौ, बकरा, सुवर, गैण्डा नगड बगड वाला हिरन शेर, बाघ, अपने शरीर का खून, यह सब चीजें चण्डी और भैरव आदि देवताओ की बलि है। ऐसी बलि के देने से मुक्ति हो जाती है और स्वर्ग की प्राप्ति भी होती है।

पुनजन्म से "पचमकारो" के द्वारा मुक्ति।

तान्त्रिक लोगो के शास्त्रो मे लिखा है कि

'मद्य मास च मीन च मुद्रा मैथुन मेवच,
एते पच मकाराम्यु मोक्षदा हि युगे युगे।
पीत्वा पीत्वा पुन पीत्वा यावत्पतति भूतल,
पुनरुत्थाय वै पीत्वा पुनजन्म न विद्यते।

भावार्थ—मद्य (शराब) मास, मीन (मछली) मुद्रा (खान की खास २ स्वाददार चीजें) और मैथुन (स्त्री पुरुष का

समागम) इन पाचो वा पच मकारा के द्वारा प्रत्येक युग में मुक्ति मिलती है। यदि कोई जन एक वार शराब पीकर दोबारा पीवे, उस के बाद फिर पीवे इसी तरह बार २ पीता जाय जब तक जमीन पर न गिर पडे, और जमीन से उठे और फिर पीवे तो उस की पुनजन्म से मुक्ति हो जाती है।

पुनजन्म मे जैना मुक्ति।

मनुष्य का आतमा वा जीव नित्य अनादि चेतन शुद्ध और अरूपी है। वह विविध प्रकार के कर्म्मों को ग्रहण करके उन के द्वारा उसी प्रकार मलिनता मे ढक जाता है, जिस प्रकार सोना मट्टी के चढने से ढक जाता है। जब तक वह कर्म्मों के बन्धनों से मुक्त नही हो जाता, तब तक वह अपने शरीर के छोडने के बाद अपने बुरे कर्म्मों का फल भोगने के लिए किसी नरक में पडता है और कभी भले कर्म्मों का फल भोगने के लिए स्वर्ग मे पहुंचता है और कभी इस पृथ्वी मे मनुष्य, पशु और वृक्ष आदि का रूप ग्रहण करके पुनजन्म के चक्र मे घूमता रहता है। परन्तु जब वह जैन सम्प्रदाय के चौबीस तीथङ्करों यथा ऋषभ देव, पारसनाथ महावीर आदि की शरण लेता है, और वह उन के सम्बन्ध में उन के ग्रंथों की शिक्षा के अनुसार इस प्रकार के विश्वास करता है, कि वह सकडों गज के ऊंचे शरीर और हजारों वर्षो की उमर रखते थे, इत्यादि, और उन के विशेष उपदेशों का विश्वासी बनता है तब वह उन की मूर्ति की पूजा और उन के सम्बन्ध मे मन्त्र आदि के पाठ और जप में और उन के बताए हुए अन्य साधनों के ग्रहण करने से सब प्रकार के भले और बुरे कर्म्मों के बन्धनों से मुक्ति पा जाता है और तब उसे कोई पुण्य वा पाप नही लगता, और तब वह सर्वज्ञ सर्वदर्शी अनन्त शक्तिमान् अनन्त

ग्रान्न भावा "परमदवर" वन जाता है और मरने क बाद राहाग म निवपुर नामक एक नगर म वि जा एक बहुत बडा सुन्दर शिला पर वसता है पहुँच कर बिना शरीर क वास करता है, ग्रौर पुनजन्म क दुखा स सदा क लिए मुक्त हो जाता है।

'पुनजन्म" से बौद्ध मुक्ति।

मनुष्य का अस्तित्व दुखमय है। वह अपने अस्तित्व म नाना प्रकार के दुख पाता है यथा —

(१) जन्मने का दुख, बुढ़ापे का दुख बीमारी का दुख मृत्यु का दुख, प्रिय वस्तु क वियोग का दुख अप्रिय क साथ रहने का दुख, किसी ग्राशा या ग्राकाक्षा के पूरा न होने का दुख इत्यादि।

(२) इन दुखा का कारण उस के भीतर जीने ग्रौर सुख भोगने की तृष्णा है, जिस से परिचालित होकर वह शरीर २ म नाना प्रकार की योनियो म जन्म लेता है।

(३) यह सब दुख उस क तब दूर हो सकते हैं जब वह "पुनजन्म' क चक्र स मुक्ति लाभ कर।

(४) पुनजन्म से मुक्ति वा निर्वाण लाभ करने क लिए उसे मूलत 'बुद्ध जी की शरण लेने ग्रौर उन्हें "सर्वज्ञ ग्रौर उनके सम्बन्ध म नेचर के नियमो के विरुद्ध जो सैकडो प्रकार की मिथ्या कहानियाँ वा गप्पें प्रचलित की गई हैं उन पर विश्वास करने की ग्रावश्यकता है। फिर जब उन की मूर्ति की फूल ग्रौर फलो स पूजा ग्रौर उन के सम्बन्ध मे स्तोत्र ग्रादि

वे गान करने और उन के बताए हुए "अष्ट मार्ग" पर चलने के योग्य होने पर नाना जन्मों के बाद वह आप भी "बुद्ध" बन जाता है, तब उस की सब प्रकार के बुरे और भले कर्मों और पुनर्जन्म से निर्वाण मुक्ति हो जाती है ।

पुनर्जन्म से सिक्खों की मुक्ति ।

गुरु नानक साहब सिक्ख पंथ के स्थापक थे । उन के पीछे नौ और गुरु हुए । गुरु अर्जुन जो पांचवें गुरु थे । उन्हों ने गुरु नानक साहब और अपने कई और गुरुओं के भिन्न कबीर, नामदेव आदि और बहुत से भक्त गुरुओं की वाणियाँ एकत्र करके एक पुस्तक रची, कि जिस का नाम "ग्रंथ साहिब" है । उन के बाद इस ग्रंथ में और कई सिक्ख गुरुओं की वाणियाँ भी शामिल की गई । साधारण सिक्ख जिन दस गुरुओं को मानते हैं, उन के भिन्न "नामधारी सिक्ख, राम सिंह नामक एक ग्यारहवें गुरु को अपना प्रधान गुरु मानते हैं । साधारण सिक्ख लोग अपने इन गुरुओं के सम्बन्ध में उन नाना प्रकार की झूठी करामातों को भी सत्य मानते हैं कि जो नाना समयों में प्रचलित की गई थी । इन गुरुओं की ओर से पुनर्जन्म से मुक्ति वा मोक्ष के सम्बन्ध में जो मूल उपदेश है वह यह है कि परमेश्वर वा राम का नाम सुनने वा जपने से मनुष्य के सब पाप कर्म नष्ट हो जाते हैं । ग्रंथ साहब के भक्तों की वाणी के अनुसार अजामील ब्राह्मण और चन्द्र मणि कजरी राम शब्द के उच्चारण करने से अपने २ पापों और पुनर्जन्म से मुक्ति पाकर मरने के अनन्तर विमान पर चढ़कर वैकुण्ठ को चले गए थे ।

पुनर्जन्म से राधा स्वामी मुक्ति ।

जसे हठ योगी अपने शरीर में वायु के चढान और उतारने और रोकने का अभ्यास करते हैं, वसे ही राधा स्वामी मत के अनुगत लोग अपने शरीर म वायु की ध्वनि मे जिस 'शब्द' की उत्पत्ति होती है, उस "शब्द' के साथ अपनी सुरत अर्थात् चित्त वा वृत्ति के चढाने और स्थिर करने का अभ्यास करते हैं । यह लोग इसी "शब्द' को अपना मालिक कुल मानते हैं, और विश्वास करते हैं कि यही शब्द जो ऊपर सूक्ष्म हैं नीचे उतर कर और मनुष्य में पहुच कर आत्मा और शरीर बन गया है । यह लोग विश्वास करते हैं कि यदि उन की शिक्षा के अनुसार दोनो आखो के बीच के स्थान से सुरत को चढाकर खोपरी के भीतर के कई और स्थानो म जिन के उन्हो ने त्रिकुटी, सुन, भवर गुफा आदि नाम रक्खे हैं, चढाते २ उस के अंतिम स्थान मे (जिसे वह सत् नाम कहते हैं) पहुचाया जाय तो फिर शब्द विषयक नाना प्रकार की सुरीली ध्वनियो के सुनने का आनन्द लाभ करने के भिन्न मनुष्यात्मा इस साधन के द्वारा पुनजन्म से भी मोक्ष पा जाता है ।

पुनजन्म से आर्य्य समाजी मुक्ति ।

आर्य्य समाज के स्थापक पण्डित दयानन्द के कथन के अनुसार मनुष्य का आत्मा अपने स्थूल शरीर को छोडकर पहले किसी शरीर के बिना हवा में रहता है । फिर ईश्वर नामक एक देवता उस के कर्म्मों के अनुसार उसे किसी मनुष्य वा पशु वा वृक्ष आदि के आकार के भीतर (उस के किसी छिद्र वा आहार की वस्तु के द्वारा) पहुचा देता है और फिर वह एक नई देह धारण करके

उस के भीतर म जन्म लेता है, और तब वह अपने पिछले कर्मों के अनुसार सुख वा दुख भोग करता है। यदि उस न अपने शरीर क द्वारा चोरी या व्यभिचार विषयक कोई पाप किया हो तो वह किसी वृक्ष वा घास क आकार म जन्म लेता है। यदि उस न अपनी वाणी क द्वारा कोई पाप किया हो तो भंगी आदि बनता है। अच्छे कर्म करके किसी राजा या धनी के यहां जन्म लेकर सुस्वादु खान सुन्दर वस्त्र और नौकर और सवारियां आदि लाभ करता है। वह इस पृथ्वी म इस प्रकार से जन्म लेकर जो २ सुख भोगता है, वही उस के लिए 'सामान्य स्वर्ग' का भोग है। और वह यहां जिस २ प्रकार के दुख पाता है वही उस के लिए 'सामान्य नरक' है। जब तक उस की इस प्रकार के कर्मों से मुक्ति नहीं होती, तब तक वह इसी प्रकार के "स्वर्ग" और "नरक" का सुख वा दुख भोगता रहता है। फिर जब सब कर्मों से उस की मुक्ति हो जाती है, तब वह शरीर धारण करने के बिना ब्रह्म नामक एक स्वतंत्र की याद म जा एक "विशेष स्वर्ग" है उस मे चला जाता है, और उस मे रहकर नाना लोकों म आनन्द से विचरण करता है। वह इकतीस नील इस खरब और चालीस अरब वर्ष तक इस ब्रह्म लोक के "विशेष स्वर्ग" म वास करता है। उसके अनन्तर वह फिर उस "विशेष स्वर्ग" से निकाला जाता है, और फिर इस पृथ्वी म जन्म लेता है, और फिर कर्मों के चक्र म पड़कर नाना प्रकार की योनियों मे भ्रमण करता रहता है। "आर्यों" विश्वास के अनुसार कोई आत्मा सदा के लिए "पुनर्जन्म" से मुक्ति नहीं पाता।

क्षमा प्राप्ति के द्वारा नरक के दुखों से ईसाई मुक्ति।

इस से पहले त्रिताप और पुनर्जन्म के दुखों से [न कि

आमा का पनरागी गनियों स] नाना प्रकार की मिथ्या कल्पना मूलक मुक्ति विषयक विधियों का वर्णन हो चुका है अब जो लोग पाप कर्मों के फल से मुक्ति के विषय म एक या दूसरे प्रकार की मिथ्या गप्पों की शिक्षा देते हैं उनका वर्णन किया जाता है।

ईसाई मत की शिक्षा यह है कि ईसा नामक एक जन ईश्वर के एकलौते पुत्र और उस के एक मात्र पूर्ण अवतार थे। वह एक कुवारी लडकी से बिना उस के किसी नर मनुष्य से सम्बन्ध हुए के उत्पन्न हुए थे। उन्हों ने कई करामातें दिखाई थीं। वह मनुष्य के मुर्दे शरीर को फिर जिन्दा कर देते थे। उन्हों ने पापी मनुष्यों को नरक की महा दुख दायक आग की जलन से बचाने के लिए आप सूली पर चढ़ कर और जान देकर और उनके सब पापों को अपने ऊपर लेकर उन का दुख भोग लिया है। इसलिए जो जन उन्हें अपना परित्राता विश्वास करता है उसके सब पापों को ईश्वर नामक एक देवता जो स्वर्ग में रहता है क्षमा कर देता है। इस क्षमा या माफी के मिल जाने से उसे फिर अपने पापों के लिए कोई और हानिकारक फल भोगना नहीं पडता। उसे अपने मरने के बाद किसी लम्बे काल तक जब तक कयामत न आवे ईश्वर के फैसले का इन्तज़ार में अपनी कबर के नीचे अथवा किसी और जगह पड़ा रहना पडेगा। फिर जब कयामत के बाद ईश्वर की अदालत से फैसला मिल जाएगा, तब उसे उस स्वर्ग स्थान में जगह मिलेगी, जहां वह उन के दर्बार में पहुँच कर उन के वहां के रहने वाले दूतों अर्थात् फरिश्तों के साथ उन की जय ध्वनि करके बहुत आनन्द से रहेगा। परन्तु जो लोग इस विधि से अपने पापों की क्षमा हासिल नहीं करेंगे वह सब "ईश्वर" से इनसाफ वाले दिन उस की ओर से एक ऐसे नरक कुण्ड में डाले जाने का फैसला पाएंगे, कि जहां

की आग कभी नहीं बुझनी, और वह अन न काल तक उस म मुनन ग्रार जनत रहग ।

क्षमा प्राप्ति के द्वारा नरक के दुखो से मुसलमानी मुक्ति ।

"अल्ला नामक एक आसमानी देवता समय २ म अपन बन्दो (मनुष्यो) के पास अपने रसूल भेजता रहा है, कि जो लोग तो अपनी बडी २ करामाते दिखा कर यह उपदश करते रहे हैं, कि वह लोग उसी को अपना माबूद (उपास्य) देवता मान और उसी एक की पूजा कर, और उस के भिन्न किसी और देवते को कभी कोई न मान और न उस की पूजा करें। मुहम्मद साहब उस के आखरी रसूल थे। उन्हो ने भी बडी २ करामातें दिखाई हैं। जो लोग उन्ह अपना आखरी रसूल या पैगम्बर और उन के मान हुए "अल्ला' या खुदा को अपना माबूद मानगे, उनके पापो को उनका यह देवता इन्साफ वाले दिन माफ अर्थात् क्षमा कर देगा और फिर उन्ह अपने पाप कर्म्मो का कोई फल भोगना न पडगा। उस के दरबार म हर एक मनुष्य के सार पाप तराजू स तोले जाएगे। अगर उन के तोलत वक्त सवाब (पुण्य) के मुकाबिल मे मुहम्मद साहब के विश्वासियो म स किसी के गुनाहो का पलडा भारी होगा, तो वह उस समय जब कि खुदा की अदालत म अपने विश्वासियो की शफाअत (रक्षा) के लिए मौजूद होगे, दूसर पलडे को अपना हाथ लगा देंगे, कि जिस स उन के सवाब के बोझे स वह पलडा पहले पलडे की अपेक्षा अधिक भारी हो जाएगा। इस तरकीब से उन के विश्वासियो को एक ओर सब पापो के दण्ड से मुक्ति और दूसरी ओर एक एसी 'बहिश्त" नामक जगह मे हमेशा के लिए रहने की आज्ञा मिलेगी, जहाँ पर शराब की नहरें बहती

है, स्वादगार फला के वक्ष मन फल देत रहत हैं शराब पिलान के लिए सुन्दर लडके मौजूद रहन हैं भोगन के लिए प्रत्येक विश्वासी पुरुष को बहत्तर २ हूर अर्थात् सुन्दर स्वर्गीय स्त्रिया मिलती है श्रार मान के रगन श्रौर रेशमी वपड पहनन को मिलते हैं। जाला जा लोग मुहम्मद साहब का सच्चा श्रौर श्राखरी पगम्बर न मानग वह मन के लिए एम दहकत हुए नरक म डाल जाएगे जहा की श्राग कभा नहीं बुझती श्रार वह उस मे पडे रह कर हमशा अजाब भोगेंगे, श्रार उन का इसक अजाब से कभी छुटकारा न हागा।

क्षमा प्राप्ति के द्वारा पाप कर्मों के फला मे ब्राह्म समाजी मुक्ति।

ब्राह्म समाज के लोग भी मुसलमाना की न्याइ ब्राह्म नामक एक विशेष दवता पर विश्वास करते हैं। वह कहते हैं कि जो लोग उन के इस उपास्य दवता का "दयामय" जान कर श्रौर अपन किसी पाप के लिए शोक अनुभव करके उस के फल वा दण्ड म बचने के लिए उस से "क्षमा" प्राथना करते है, उन की इस प्राथना को सुन कर वह अपने दया भाव के कारण उन के उस पाप का क्षमा कर दता है, श्रौर फिर उस पाप के लिए उन्हें कोई पानकारी फल भोगना नही पडता। उन के इस "ब्राह्म" दवता न हर एक मनुष्य के लिए यह जरूरी रखा है कि वह कभी न कभी अपन पापो से अनुतप्त होकर श्रौर उन के दण्ड मे बचने के लिए उस से क्षमा प्राथना करेगा, श्रौर फिर इस क्षमा को पाकर श्रौर पवित्र होकर उस की इच्छा को पालन करेगा। उनके विश्वास के अनुसार प्रत्येक मनुष्य ही उन के इस ब्रह्म को कभी न कभी ग्रहण करके उसका उपासक बनगा श्रौर उसका उपासक बना

मा त है। इस सत्य आत्मिक मोक्ष के भिन्न कोई और सत्य आत्मिक मोक्ष नहीं। इसलिए इस सत्य मोक्ष के ज्ञान से अन्ध रह कर जिन्हों ने एक वा दूसरे प्रकार के अपने शारारिक रोगों वा अपने सम्बन्ध में औरों वा नाना क्रियाओं से किसी प्रकार के हानि कष्टों वा पूर्णतः कल्पना मूलक मिथ्या नरकों वा मिथ्या विश्वास मूलक पुनर्जन्म के दुखों से उद्धार पाने का नाम जो आत्मिक मोक्ष समझा है, और जिन बातों का उस के अपने आत्मिक पतन वा आत्मिक नाश से कोई सम्बन्ध नहीं उन में से कोई भी सच्ची आत्मिक मोक्ष नहीं।

(२) किसी शारीरिक रोग वा कष्ट से, बेशक जहां तक सम्भव हो न केवल किसी मनुष्य की, किन्तु उस के भिन्न किसी पशु की भी उचित रूप से रक्षा होनी चाहिए। इसी प्रकार किसी और के किसी सच्चे अपराध से जहां तक किसी मनुष्य वा पशु आदि को शरीर के भिन्न कोई अन्याय मूलक हार्दिक कष्ट भी मिलता हो, उस से भी उस की उचित रूप से अवश्य रक्षा होनी चाहिए, और इसलिए अपराध मूलक नाना आघातों वा कष्टों से एक वा दूसरी सामाजिक प्रत्येक राज्य वा अन्य शासनकर्ताओं के द्वारा जन समाज की रक्षा करने के निमित्त एक वा दूसरे प्रकार की विधि प्रचलित हुई है। परन्तु नाना मनुष्यों ने सच्चे वा झूठे जो इस प्रकार दुखों से बचने का नाम आत्मा की मुक्ति रक्खा है वह सच्ची आत्मिक मुक्ति वा मोक्ष नहीं है। किन्तु सच्ची आत्मिक मोक्ष की प्राप्ति के निमित्त किसी मनुष्य का अपने नाना पाप कर्मों और अपनी विविध मिथ्याओं के विषय में घृणा उत्पादक सत्य बोधों के भिन्न कई प्रकार के हार्दिक कष्टों का अपने ऊपर लेने और उन के द्वारा उचित हानि परिशोध

ररने शुद्ध ज्ञान की आवश्यकता है। इसी प्रकार उसे अपने आत्मिक विकास के लिए भी सत्य और शुभ के प्रचार और नाना स्थाओं में अपने किसी कर्तव्य कर्म के पूरा करने, और औरों के हित के निमित्त जब उसे उस किसी के उत्पादन वा अन्य बुरे आचरणों से कोई आघात् या कष्ट वा दुःख वा यन्त्रणा मिले उस भी उसका ग्रहण करने की जरूरत है। और ऐसे नाना प्रकार के दुःखों के भिन्न किसी का धन और विद्या आदि के उपार्जन अथवा किसी शुभ अभिप्राय से देश भ्रमण वा अपने शरीर के रोग के समय उस के निवारण का किसी ऐसी ही और आवश्यकता के समय में भी अरुचिकर औषधि आदि के सेवन निमित्त कष्ट के स्वीकार करने की आवश्यकता है, न कि उन से बचने की।

अब जिन दुःखों से मोक्ष पाने के विषय में नाना प्रकार की मिथ्या गप्पें प्रचलित की गई हैं, उन के विषय में भी सुनो —

१—त्रिताप नामक नाना प्रकार के दुःखों से मुक्ति पाने का जो यह उपाय बताया गया है, कि मनुष्य इस प्रकार का अभ्यास करे, कि मेरे शरीर के जिस पेट के अंग में शूल का महा कष्ट दायक दर्द हो रहा है वह उसकी किसी हड्डी के टूट जाने वा उस पर किसी सख्त आघात् के लग जाने वा किसी मच्छर वा बिच्छू के डंक मारने से यन्त्रणा उत्पन्न हो रही है, वह शरीर मैं नहीं हूं, किन्तु मैं आत्मा हूं, तो क्या ऐसे विचार वा ऐसे किसी अभ्यास से किसी जन को अपनी कुछ भी शारीरिक पीड़ा अनुभव न होगी? वा उस अपने शरीर को भूख की तृप्ति के लिए आहार वा प्यास की तृप्ति के लिए जल के न मिलने पर क्या किसी ऐसे विचार के अभ्यास से फिर कोई कष्ट न होगा? वा जब उसे खट-मल वा मच्छर वा पिस्सू आदि काट रहे हों तो उन के ऐसा करने

न उसे कोई तकलीफ अनुभव न होगी ? इसी प्रकार यदि उस पर आकाश से ओले गिर रहे हों, तो क्या उन की चोट से उसे कोई दुख न मालूम होगा ? इन प्रश्नों के उत्तर में हमारा सदा का यह तजरबा बताता है कि इस प्रकार के किसी कष्ट वा किसी यन्त्रणा वा किसी और दुख की थोड़ी वा बहुत अनुभूति से हम उस समय तक बच ही नहीं सकते, जब तक हम पूर्णतः अचेत वा बेहोश न हो जाएं क्योंकि, यद्यपि आत्मा शरीर नहीं है, तथापि वह शरीर के साथ इतना गहरा जुड़ा हुआ है, और उस की स्नायविक प्रणाली के साथ खास कर उस का इतना गहरा सम्बन्ध है कि जब तक उस प्रणाली का कोई अंश भी जिस के द्वारा आत्मा को कोई सुख वा दुख अनुभव होना हो, अपनी उस बोध दायिनी शक्ति के विचार से पूर्णतः भुग्न वा नष्ट न हो जाय, तब तब वह उस के द्वारा सुख वा दुख की अनुभूति से बच नहीं सकता। यदि किसी ऐसी विधि से दुख की निवृत्ति सम्भव होती, तो मनुष्य को फिर किसी प्रकार की शारीरिक चिकित्सा की आवश्यकता न होती, और वैद्य वा हकीम वा डाक्टर आदि का कोई व्यवसाय दिखाई न देता, और किसी हास्पीटल वा औषधालय आदि का कहीं अस्तित्व न होता।

२—यदि वेदान्त मत के अनुसार इस प्रकार के विश्वास से कि यह जगत् मिथ्या वा भ्रम है और एक "ब्रह्म" ही सत्य है, (जब कि वास्तव में यह जगत् वा विश्व वा नेचर ही सत्य है और "ब्रह्म" विषयक विश्वास पूर्णतः मिथ्या है) मनुष्यों के सब प्रकार के दुखों की निवृत्ति हो सकती होती, तो कम से कम वेदान्त मत के साधु वा स्वामी वा संन्यासी आदि कहलाने वाले जन भूख के समय मिथ्या जगत् की मिथ्या रोटी को खाकर और जगत् के

मिथ्या जल को पीकर उन के द्वारा अपने भीतर सच्ची शांति न पा सकते और न पाते ? और यदि सत्य रोटी के स्थान में मिथ्या रोटी के खाने से ही शांति मिलती होती और शरीर में रुधिर की उत्पत्ति होती होती, तो वह औरों से उसकी भीख मांगने की बजाय मट्टी खाकर कि जो हर जगह मिल सकती है अपना निर्वाह क्यों न करते ? क्योंकि, वह वेदान्ती बन कर और कहला कर भी अपने आत्मा में अनाज की सत्य रोटी और मिट्टी की (अनाज विहीन) मिथ्या रोटी में जो सच्चा अन्तर है, उसे अवश्य भली भांति अनुभव करते हैं। इस के भिन्न ऐसा कौन सा वेदान्ती है कि जिस पर यदि डण्डों की मार पड़ती हो, वा जिस पर ओलों की वर्षा होती हो, वा जिस के हाथ आग में डाले गए हों वा जिसे मच्छर या पिस्सू काट रहे हों, तो उसे ऐसी दशा में कुछ कष्ट अनुभव न हो ? कोई नहीं। क्योंकि कोई जन भी अपने शरीर में स्नायु जाल के वर्तमान रहने और आप होश की हालत में होने पर, नेचर के नियमानुसार कम वा ज्यादा दुःख अनुभव करने के बिना रह नहीं सकता।

३—फिर पुनर्जन्म विषयक दुःखों से मुक्ति के विषय में जो नाना प्रकार की गप्पें प्रचलित हो गई हैं, सो जैसा कि इसमें पहले बताया जा चुका है, जब पुनर्जन्म विषयक यह विश्वास ही पूर्णतः मिथ्या है कि मनुष्य अपने स्थूल शरीर के त्याग करने पर किसी और स्थूल शरीर के साथ मनुष्य वा पशु आदि के रूप में इसी पृथ्वी में जन्म लेता है, तब उस से मुक्ति पाने के क्या माने ? कुछ भी नहीं।

४—फिर "पुनर्जन्म" के मिथ्या विश्वास पर स्थापित उस के दुःखों से मुक्ति पाने के लिए जिन नाना केशों वा रहित केशों रखने और कई प्रकार के तिलक और वस्त्र और कई प्रकार की

मानाए और अन्य चिह्न धारण करने वा किसी मूर्ति के दर्शन वा फल फूल धूप दीप नवैद्य और भेंट आदि के द्वारा उस की पूजा करने अथवा नाना नदियों, भीलों, सोतों, कुण्डों, बावलियों कूपों वा तलाबों आदि में स्नान वा उन का जल पान करने वा उन में से किसी में किसी मर हुए जन के स्थूल शरीर की हड्डियों के डालने, वा किसी देश वा उस स्थान में मरने, वा कहीं भी मरने के समय किसी नाम के उच्चारण वा मन्त्र आदि के जप करने वा किसी के मरने के बाद उसके नाम से किसी कहलाने वाले तीर्थ स्थान में पिंड दान तर्पण करने और एक विशेष श्रेणी के लोगों को भोजन खिलाने और उन्हें दान देने आदि गप्पों का प्रचार किया गया है ऐसी सब गप्पें पुरोहित श्रेणी के नाना जनों ने औरों का धन अपहरण करने के लिए अपनी २ ओर से घड़ी और फैलाई हैं। इसी प्रकार पशुओं की बलि के द्वारा मुक्ति पाने का मांस भोजी "देवता" वा जनों ने प्रचार किया है और मांस मदिरा और मधु आदि के सेवन के द्वारा मुक्ति मिलने की शिक्षा उन में सवी जनों वा देवता ने दी है और ऐसा करके उन सब ने ही अपने और औरों के पाप कर्मों और आत्मिक अन्धकार और अज्ञान को उलटा और भी बहुत बढ़ाया और उन्हें पतित बनाया है।

इस से आगे चल कर वह सब गप्पें जो लार्ड गार्ड वा अल्ला वा अकाल पुरुष वा ईश्वर वा ब्रह्म आदि किसी कहलाने वाले देवता से पापों से क्षमा प्राप्ति के विषय में प्रचलित की गई हैं, उन के सम्बन्ध में प्रथम तो यह कहना ही यथेष्ट है कि जब ऐसे किसी देवता का अस्तित्व ही मिथ्या कल्पना के भिन्न और कुछ नहीं, तब फिर उससे क्षमा चाहने और क्षमा लाभ करने के ही कुछ मानी नहीं।

फिर यदि हम युक्ति देने के लिए कुछ देर के लिए यह मान लें, कि गाड वा ईश्वर वा अल्ला वा ब्रह्म आदि कहलाने वाला देवता कोई सच्चा अस्तित्व भी रखता है, और वह किसी स्वर्ग नामक स्थान में भी रहता है और वहाँ से उस ने इस पृथ्वी पर अपनी ओर से जो कहलाने वाले नाना पैगम्बर आदि भेजे हैं वह सब हमारी स्थूल पृथ्वी में जन्म लेने से पहले नेचर के नियम के विरुद्ध किसी और तरह से पैदा होकर और पल कर और बड़े होकर स्वर्ग में ही उस के साथ रहते थे, और उन्हें उसने यहाँ इस लिए भेजा था कि वह लोगों को यह बतावें और सिखावें, कि वह इस २ प्रकार के विश्वास करने पर वह उन्हें उनके पापों से मुक्ति दे सकता है, तो भी वह जब कि उसी गाड वा अल्ला वा खुदा वा ईश्वर ने अपने जिन २ पैगम्बरों और ऋषियों आदि के द्वारा अपनी पुस्तकें भेज कर उन में अपने विषय में जो हाल बताया है, उस से जब कि उस का मनुष्य के आत्मा के गठन प्राप्त रूप और उस के रोगों और उस के पतन और विकास और इसीलिए सत्य धर्म्म के सम्बन्ध में एक ओर पूर्णत अज्ञानी और दूसरी ओर कई प्रकार के पापों का शिक्षक और कर्ता होना प्रमाणित होता है, तब उसे पहले अपने अज्ञान और अपने पापों से मोक्ष पाने की आवश्यकता है। और ऐसा कोई रचना जो आप सत्य धर्म्म के तत्वों से अजाना और अपने नाना प्रकार के कर्म्मों के विचार से आप महा पापी हो वह अपनी अपेक्षा किसी और कम पापी को कैसे मोक्ष दे सकता है ?

इस के भिन्न क्या यह सच्च नहीं कि उसने 'सर्वज्ञ' कहला कर भी जिन ऋषियों वा मुनियों वा पैगम्बरों वा नबियों वा

अपन किसी अवतार वा किसी विशेष पुत्र आदि के द्वारा पापा मे मोक्ष के विषय म जो शिक्षाए दी है, वह सब एक प्रकार की नहीं, किन्तु भिन्न २ है, और कितनी ही उन मे से एक दूसरे से पूर्णत विरुद्ध है ' इसलिए उस का ऐसी भिन्न २ और कई स्थाओं म एक दूसर की विरुद्ध शिक्षाओ के विश्वासी उन शिक्षाओ को लेकर आपस म लडत और झगडत रहत हैं, और एक सम्प्रदाय के लोग अपन मोक्ष विषयक विश्वास को सच्चा और दूसर के मोक्ष विषयक विश्वास को झूठा बताते रहते है, और उन के ईश्वर वा अल्ला वा खुदा वा ब्रह्म कहलान वाले देवता साहब किसी कहलान वाले स्वर्ग मे बैठे हुए अथवा उन म से किसी के विश्वास के अनुसार सब जगह वर्तमान रहकर उन म इस प्रकार की फूट वा लडाई पैदा करके उस का तमाशा देखन के द्वारा अपना स्वर्गीय आनन्द लाभ करते रहते है ? फिर यदि यह सब एक ही "सच्चा" कहलाने वाले पुरुष की ओर से दिए गए हैं, तो वह भिन्न २ और उन म से कितने ही एक दूसरे के विरुद्ध क्या होते ? इसलिए यह कहना कि वह किसी भी "सच्चा" द्वारा वा ओर से दिए वा बताए गए है, मिथ्या गप्प के भिन्न और कुछ भी नहीं।

फिर यह भी सोचने की बात है कि यदि यह कल्पना की जाय कि उस के कहलान वाले सच्चा पुरुष के सामन कई सम्प्रदाय के पापी खड़े हुए हैं जिन म स कुछ अपन आप को उस के इकलौते पुत्र का विश्वासी बतात हैं कुछ अपन आप को उस के किसी पैग़म्बर का, कुछ उसके किसी कहलान वाले आखरी पैगम्बर का, और कुछ अपन आप को उसके साक्षात् दर्शन और पूजा कर्ता भक्त, और कुछ उस के किसी हिंदु अवतार के विश्वासी और उस के नाम के

फिर यदि हम मुक्ति पाने के लिए कुछ देर के लिए यह मान भी लें कि गाड या ईश्वर या अल्ला या ब्रह्म आदि कहलाने वाला देवता कोई सच्चा अस्तित्व भी रखता है, और वह किसी ख़ास नामक स्थान में भी रहता है और वहाँ से उस ने इस पृथ्वी पर अपनी ओर से जो रसूल या नाना पैग़म्बर आदि भेजे हैं वह सब हमारी स्थूल पृथ्वी में जन्म लेने से पहले ईश्वर के नियम के विरुद्ध किसी और तरह से पैदा होकर और फिर कर भार रहे होकर स्वर्ग में ही उस के साथ रहते थे, और उन्हें उसने यहाँ इस लिए भेजा था कि वह लोगों को धर्म बतावें और सिखावें, कि वह इस २ प्रकार के विश्वास करने पर वह उन्हें उनके पापों से मुक्ति दे सकता है, तो भी वह जब कि उसी गाड या अल्ला या खुदा या ईश्वर ने अपने जिन २ पैग़म्बरों और ऋषियों आदि के द्वारा अपनी पुस्तक भेज कर उन में अपने विषय में जो हाल बताया है उस से जब कि उस का मनुष्य के आत्मा के गठन प्राप्त रूप और उस के रोगों और उस के पतन और विकास और इसीलिए सत्य धर्म्म के सम्बन्ध में एक ओर पूर्णतः अज्ञानी और दूसरी ओर कई प्रकार के पापों का शिक्षक और कर्ता होना प्रमाणित होता है, तब उसे पहले अपने अज्ञान और अपने पापों से मोक्ष पाने की आवश्यकता है। और ऐसा कोई देवता जो आप सत्य धर्म्म के तत्वों से अज्ञानी और अपने नाना प्रकार के कर्म्मों के विचार में आप महापापी हो, वह अपनी अपेक्षा किसी और कम पापी को कैसे मोक्ष दे सकता है ?

इस के भिन्न क्या यह सच नहीं, कि उसने "सर्वज्ञ" कहलाकर भी जिन ऋषियों वा मुनियों वा पैग़म्बरों वा नबियों वा

अपने किसी अवतार वा किसी विशेष पुत्र आदि के द्वारा पापों से मोक्ष के विषय में जो शिक्षाएं दी हैं, वह सब एक प्रकार की नहीं, किन्तु भिन्न २ हैं, और कितनी ही उन में से एक दूसरे से पूर्णतः विरुद्ध हैं ? इसीलिए उस को ऐसा भिन्न २ और कई दशाओं में एक दूसरे की विरुद्ध शिक्षाओं के विश्वासी उन शिक्षाओं के लिए आपस में लड़ते और झगड़ते रहते हैं और एक सम्प्रदाय के लोग अपने मोक्ष विषयक विश्वास को सच्चा और दूसरे के मोक्ष विषयक विश्वास को झूठा बताते रहते हैं और उन के ईश्वर वा अल्ला वा गुरु वा ब्रह्म कहलाने वाले देवता साहब किसी कल्पित वाने स्वर्ग में बैठे हुए अथवा उन में से किसी के विश्वास के अनुसार सब जगह वर्तमान रहकर उन में इस प्रकार की फूट वा लड़ाई पैदा करके उस का तमाशा देखने के द्वारा अपना स्वर्गीय आनन्द लाभ करते रहते हैं ? फिर यदि यह सब मत एक ही "सच्चा" कहलाने वाले पुरुष की ओर से दिए गए होते, तो वह भिन्न २ और उन में से कितने ही एक दूसरे के विरुद्ध क्यों होते ? इसलिए यह कहना कि वह किसी भी "सच्चा" पुरुष की ओर से दिए वा बनाए गए हैं मिथ्या गप्प के भिन्न और कुछ भी नहीं।

फिर यह भी सोचने की बात है कि यदि यह कल्पना की जाय कि उस के कहलाने वाले सच्चे पुरुष के सामने कई सम्प्रदाय के पापी खड़े हुए हैं जिन में से कुछ अपने आप को उस के इकलौते पुत्र का विश्वासी बताते हैं कुछ अपने आप को उस के किसी पैग़म्बर का, कुछ उसके किसी कहलाने वाले आख़री पैग़म्बर का, और कुछ अपने आप को उसके साक्षात् दर्शन और पूजा कर्ता भक्त ... कुछ उस के किसी हिन्दु अवतार के विश्वासी और उस के

जप कर्ता और कुछ अपने आप को गंगा माई के स्नान और जल पान कर्ता, आदि बता कर यह कहते हो, कि हम तो तेरी ही दी हुई शिक्षा के विश्वासी रहे हैं, तब ऐसी दशा में क्या वह उन सब को अपने कहलाने वाले स्वर्ग में जगह देगा या उनमें से कुछ को? यदि कुछ को, तो किन २ को और क्यों? और क्या किसी ऐसे ख्याली दरबार के समय वहां उसके कहलाने वाले एक पैगम्बर की किसी दूसरे पैगम्बर या उस के किसी पैगम्बर की उस के कहलाने वाले किसी विशेष पुत्र, या केवल "राम" या "हरी" नाम के जप उच्चारण या गंगा जल के पान से मुक्ति का उपदेश देने वाला आदि २ के साथ लड़ाई शुरू न हो जाएगी, और उन में से हर एक ही चिल्ला २ कर यह न कहेगा, कि ए "सच्चन शिक्षक" मैंने तो तेरी ही बताई हुई शिक्षा का प्रचार किया है, और तेरे भिन्न किसी और की शिक्षा का नहीं, इसलिए तू मेरे सम्प्रदाय के लोगों को ही स्वर्ग में भेज, और दूसरों को उस में न भेज, किन्तु नरक में डाल? ऐसी अपील के समय "सच्चन" देवता जी किस को अपना भेजा हुआ दूत और अपनी शिक्षा का प्रचारक मानेगे और किस को नहीं?

इस के सिवाय यह बात भी विचार के योग्य है कि जिस जिस मनुष्य ने जिस २ अन्य मनुष्य के सम्बन्ध में जो २ पाप वा अपराध किए हों और उन के द्वारा उस ने उन के धन वा स्वास्थ्य वा बल वा सुख या उनकी सम्पत्ति वा शान्ति आदि की जो २ कुछ हानि की हो, और अपने इस नीच कर्मों के द्वारा उस ने नेचर के अटल नियमानुसार अपने आत्मा का जिस २ प्रकार का भयानक पतन किया हो, उस का क्या यह पतन 'सच्चन' कहलाने वाले देवता के ऐसा कह देने से कि "जाओ मैंने तुम्हारे सब पाप क्षमा कर दिए' दूर हो सकता है? क्या किसी आत्मा का कोई पाप

वा उसका कोई रोग वा अपने विषय में अज्ञान किसी के द्वारा माफ हो जाने की चीज़ है ? कदापि नहीं । क्योंकि नेचर में किसी शक्ति का कोई गति वा क्रिया अपना असर वा फल उत्पन्न करने के बिना नहीं रहती ।

फिर जिस के सम्बन्ध में जिस किसी जन की ओर से जिस पाप के द्वारा जो २ हानि की गई है उस हानि प्राप्त जन को किसी एक "सज्जन" पुरुष की ओर से उस के किसी हानि कर्ता को क्षमा देकर छोड़ देने और इस से भी बढ़कर उस 'स्वर्ग' के सुखों का भागी बना देने से कौन सा न्याय वा इन्साफ मिल सकता है ? कोई भी नहीं । कल्पना करो कि राम ने श्याम के पास पांच हज़ार रुपए अमानत में रक्खे थे वा उसे उधार दिए थे और श्याम ने बेईमान बन कर उस के वह रुपए दबा लिए हों, और उसके बार २ मांगने पर भी वापिस न दिए हों, और बरक्त अली अपने पड़ोसी मुहम्मद बख़्श नामक एक जन की बेटी को भगाकर ले गया हो, और उस ने उसे किसी कंजरी के पास बेच दिया हो, और टामस ने अपने नौकर से खफा होकर अपनी बन्दूक से गोली मार कर उसकी हत्या कर दी हो और ईश्वर वा अल्ला वा खुदा वा गाड जो ने किसी पैगम्बर आदि की सिफारिश को मान कर उन के इन पापों के विषय में क्षमा देकर उलटा उन्हें अपने स्वर्ग में भेज दिया हो, तो क्या उस का ऐसा फैसला न्याय के अनुसार वा न्याय संगत कहा जा सकता है ? कदापि नहीं । क्योंकि जो रुपया राम ने श्याम के पास अमानत रक्खा था वा उसे उधार दिया था उस के लेने वा छोड़ देने वा माफ कर देने का राम को तो अवश्य अधिकार था, लेकिन ईश्वर वा अल्ला आदि जो कहलाने वाले किसी देवता साहब को उसे के माफ करने का न्याय मूलक

कोई अधिकार नहा हो सकता ? इसी प्रकार जिस किसी पाप से जिस किसी जन या काई और हानि हुई हो, वह उस यदि किसी कारण से वरदाश्त कर ले, और उस किसी मजिस्ट्रेट या जज से किसी राज विधि के द्वारा सजा न दिलवाए, और उस इस प्रकार के बिना दण्ड के निकलवा न जाने दे, वा माफ कर दे, तब तो उस के कुछ अवश्य मानी हो सकते हैं, किन्तु किस, न्याय कर्ता मैजिस्ट्रेट या जज को अपने आप या किसी की सिफारिश आदि से उस छोड़ देने का कदापि अधिकार नहीं हो सकता। इसलिए उन किसी सम्बन्ध देवता या किसी की सिफारिश या अपनी हि किसी प्रेरणा के वशीभूत होकर किसी सच्चे पापों या अपराधी को क्षमा देकर दण्ड से बरी कर देना कभी भी न्याय सगत या इन्साफ में दाखिल नहीं हो सकता। और किसी इस अन्याय युक्त फैसल को करने वाला कोई भी न्याय परायण पुरुष नहीं कहा जा सकता। इसीलिए पापों के सम्बन्ध में किसी देवता से क्षमा प्राप्ति की यह शिक्षा भी मुक्ति विषयक अन्य मिथ्या गप्पों की भांति पूर्णतः मिथ्या है।

दूसरा परिच्छेद।

आत्मिक विकास और उस की नितान्त आवश्यकता।

प्रश्न। आत्मा की निर्म्माणकारी शक्ति के विकसित करने से क्या मुराद है ?

उत्तर। नेचर के प्रत्येक विभाग में रात दिन जो अविच्छिन्न परिवर्तन जारी है उस परिवर्तन से जो अस्तित्व पहले की अपेक्षा बिगड़ते जाते हैं, उन का यह परिवर्तन पतन वा ध्वंस वा विनाशकारी परिवर्तन कहलाता है और जो अस्तित्व पहले की अपेक्षा श्रेष्ठ बनते जाते हैं उन का यह परिवर्तन निर्म्माण वा विकासकारी परिवर्तन कहलाता है। नेचर का पहला कार्य्य पतन वा विनाशकारी और दूसरा कार्य्य निर्म्माण वा विकासकारी कार्य्य कहलाता है। अब यदि तुम इन दोनों विनाश और विकास विषयक महा सत्यों को देख और पहचान सको, तो तुम्हें मालूम हो जाएगा, कि मनुष्य के प्रति नेचर की सत्य शिक्षा यह है —

"ऐ मनुष्य! यदि तू अपनी उन शक्तियों के द्वारा परिचालित होगा कि जो पतन कारी हैं तो तू चाहे किसी भी कहलाने वाले देवता वा नबी वा ईश्वर वा परमेश्वर वा ब्रह्म वा कृष्ण वा ब्रह्मा वा अकाल पुरुष आदि वा किसी भी धर्म मत का विश्वासी हो और तू धर्म के नाम से चाहे जिस प्रकार की और क्रियाएं करता हो, तेरा पतन अनिवार्य्य है। न दुष्कारी शक्तियों के

अधीन रहकर और उन के महा भयानक दुखो और अन्य फलो को भोग कर और उन के द्वारा अपनी निर्म्माणकारी शक्ति को खोकर एक दिन अपने अस्तित्व के विचार से ही पूर्णत नष्ट हो जाएगा। परन्तु यदि एक ओर तू अपनी पतनकारी गतिया से सत्य मोक्ष लाभ करने के योग्य हो सके, और दूसरी ओर मेरे निर्म्माण वा विकासकारी कार्य्य के लिए अपनी शारीरिक और मानसिक प्रत्येक शक्ति और धन सम्पत्ति आदि अपने प्रत्येक पदार्थ को अर्पण कर सके, तो तू अपनी ऐसी गति से मेरे निर्म्माण वा विकासकारी कार्य्य मे जहा तक सहायक वा सेवाकारी होगा, वहाँ तक तू अपनी निर्म्माणकारी शक्ति को उन्नत वा विकसित करने के योग्य बनेगा। फिर तुझे यह भी भली भांत मालूम रहे, कि तू अपनी भ्रान्ति से जिस शरीर वा अन्य जिस किसी पदार्थ को "अपना" समझता है, उन मे से कोई भी वास्तविक तेरा नही है। उन सब का प्रकाश मुझ से हुआ है। वह सब कुछ मेरा है और मुझ से प्रगट हुआ है। यदि तू ने अपने अज्ञान वा नीच रागो के वशीभूत होकर उन को मेरे निर्म्माण वा विकास कार्य्य के लिए अर्पण न किया, तो उन सब के द्वारा तेरी और तेरे द्वारा अन्य अस्तित्वो की जो कुछ भलाई हो सकती थी, एक ओर वह न होगी, और दूसरी ओर तू आप भी पतनकारी गतिया मे पडा रहकर और गल सड कर एक दिन पूर्णत नष्ट हो जाएगा। अब यह तेरे लिए है कि चाहे तू मेरे ध्वस वा विनाशकारी कार्य्य का साथी बन कर औरो को बिगाड और नष्ट कर, और आप भी बिगड और नष्ट हो, और चाहे मेरे निर्म्माण वा विकासकारी कार्य्य का साथी बन, और उस मे औरो को श्रेष्ठ बना और आप भी श्रेष्ठ बन।

प्रश्न। औरों को श्रेष्ठ बनाने से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर। नेचर के किसी जगत् के अस्तित्वों के आकारों वा उनकी आन्तरिक प्रकृतियों को पहले की अपेक्षा उत्तम बना देना उन्हें श्रेष्ठ बनाने का कार्य्य कहलाता है।

प्रश्न। इस प्रकार का शुभ कार्य्य कोई मनुष्य कब कर सकता है ?

उत्तर। जब कि उस के आत्मा में औरों के भले के लिए किसी प्रकार के शुभ वा उच्च भाव की जाग्रति और उस की यथेष्ट रूप से उन्नति हो चुकी हो।

प्रश्न। जो मनुष्य आप स्वार्थ वा सुख परायण हो और अपने नाना नीच अनुरागों और अपनी नाना नीच घृणाओं की तृप्ति वा तुष्टि करके सुख वा रस लाभ करने के पीछे पागल बना हुआ हो, और अपने सुखों की प्राप्ति के लिए विविध प्रकार से औरों का अहित वा अशुभ वा उन की हानि करने के लिए तयार रहता हो, और जिस के आत्मा में अपने नीच स्वार्थ से शून्य किसी और की कुछ भी विशुद्ध भलाई करने के लिए किसी प्रकार की कोई आकांक्षा वर्तमान न हो उस के आत्मा में किसी और के हित के लिए अपने सुख, आराम, धन पदार्थ तन और मन आदि के अर्पण करने के लिए कोई पर हित उत्पादक उच्च भाव वा उच्च अनुराग क्योंकर उत्पन्न हो सकता है ?

उत्तर। यदि एक ओर उस के आत्मा में किसी ऐसे उच्च भाव वा उच्च अनुराग के उत्पन्न और उन्नत होने की कोई जन्म जात योग्यता वर्तमान हो और दूसरी ओर उसे जाग्रत और उन्नत

करने के लिए जिस प्रकार की शक्ति की आवश्यकता है, उस के प्रभाव उस तक पहुंच सकें तो नेचर के अटल नियम के पूरा होने पर उस के आत्मा में एक वा दूसरे प्रकार का कोई उच्च भाव अवश्य प्रस्फुटित और उन्नत हो सकता है। इस समाज में ऐसे कितने ही आत्मा हैं कि जिन के आत्माओं में इसी विधि से इस प्रकार के एक वा दूसरे उच्च भाव की एक वा दूसरी सीमा तक उत्पत्ति और उन्नति हुई है।

प्रश्न। क्या किसी मनुष्य में अपने तौर पर भी किसी प्रकार के उच्च भाव का प्रकट रूप में प्रकाश हो जाता है?

उत्तर। हां किसी २ जन में दया वा सहानुभूति आदि विषयक किसी २ पर हित उत्पादक उच्च वा सात्विक भाव का स्वभाव जात भी प्रकाश हो जाता है परन्तु किसी ऐसे जन में आत्म प्रकाशक और सत्य धर्म्म विषयक ज्ञान प्रदायक वह सर्वोच्च और सब श्रेष्ठ ज्योति और आत्म मोक्ष दायक और अन्य विविध उच्च भाव विकासक वह सर्वोच्च और सब श्रेष्ठ तेज नहीं होता, कि जिस का देवात्मा में उस की देव शक्तियों की विशेषता के कारण प्रकाश हुआ है।

प्रश्न। तब क्या नेचर के विकासकारी कार्य्य में सहायक बनने और उस के द्वारा अपने आत्मा की निर्म्माणकारी शक्ति की उन्नति करने के लिए पर हित वा पर सेवा विषयक विविध प्रकार के उच्च भावों का अपने आत्मा में उत्पन्न और उन्नत करना प्रत्येक आत्मा के लिए नितान्त आवश्यक है?

उत्तर। हां, निश्चय। प्रत्येक ऐसे आत्मा में पर हित

उत्पादक माना उच्च भावों वा उच्च अनुरागों का उत्पत्ति और उन्नति की नितान्त आवश्यकता है कि जिस में उन के उत्पन्न वा उन्नत होने की कुछ भी जन्म जात योग्यता वर्तमान हो।

प्रश्न। नेचर के विविध जगतों के परस्पर के सम्बन्ध में जो निम्माणकारी कार्य्य हो रहा है, उस के द्वारा क्या २ शुभ फल उत्पन्न होते हैं ?

उत्तर। एक ओर जो २ अजीवित और जीवित अस्तित्व जहां तक श्रेष्ठ वा उत्तम बन सकते हैं वहां तक वह श्रेष्ठ वा उत्तम बनते हैं, और दूसरी ओर प्रत्येक जगत् में जो २ अस्तित्व जहां तक उत्तम बनते जाते हैं वहां तक उन में उच्च मेल स्थापित और उन के परस्पर का नीच अमेल दूर होता जाता है।

प्रश्न। नेचर के विविध जगतों के परस्पर अमेल से क्या मुराद है ?

उत्तर। नेचर में सौर जगत् के निम्माण हो चुकने पर पृथ्वी के विकास क्रम में वह समय आता है जब कि उस में उसकी अजीवित शक्तियों में से कुछ शक्तियां श्रेष्ठ बनते २ जीवित दशा में पहुंच जाती हैं, परन्तु वह किसी जीवित शरीर के निम्माण करने के योग्य नहीं होतीं। फिर इन जीवित शक्तियों में से कुछ शक्तियां विकसित होकर ऐसी दशा में पहुंच जाती हैं कि वह अपने लिए एक "सेल" के अत्यन्त निम्न श्रेणी के जीवित शरीरों के निम्माण और पालन करने की योग्यता लाभ करती हैं। फिर इन एक सेल को निम्माणकारी जीवनी शक्तियों में से कितनी ही जीवनी शक्तियां उन्नत होकर एक सेल से अधिक

कई जीवित मल विशिष्ट आकारो के बनाने और पालन करने की योग्यता को प्राप्त होता हैं। इसी विकास के क्रम में जो २ जीवनी शक्तियां जहां २ तक धीरे २ श्रेष्ठ बनने की योग्यता लाभ करती जाती हैं, वहां २ वह अपने लिए श्रेष्ठ कोटि के शरीर बनाने की योग्यता को भी प्राप्त होती जाती हैं। इन्हीं शरीर निर्माणकारी जीवनी शक्तियों से उद्भिद् और पशु जगत् के हजारों भिन्न २ प्रकार के अस्तित्वों की उत्पत्ति हुई है। फिर पशु जगत् में उस की इसी उन्नति के क्रम में मनुष्य के अस्तित्व का प्रकाश हुआ है, और फिर उस से मनुष्य जगत् बना है।

अब सौर जगत् के साथ उद्भिद् पशु और मनुष्य जगतों को मिला कर नेचर में से जो चार जगत् प्रगट हुए हैं, वह सब आपस में एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं, और वह एक दूसरे के साथ बहुत गहरा सम्बन्ध रखते हैं।

भौतिक जगत् के कई प्रकार के पदार्थों यथा कार्बन, आक्सीजन, हाईड्रोजन और नाईट्रोजन और कुछ २ मात्रा में अन्य पदार्थों को लेकर साधारणतः सब जीवित शरीर बने हैं। इसलिए कोई शरीर निर्माणकारी जीवनी शक्ति चाहे वह उद्भिद् जगत् की हो, चाहे पशु वा मनुष्य जगत् की, इन जड पदार्थों के बिना अपने लिए कोई जीवित शरीर निर्माण नहीं कर सकती। इसी प्रकार कोई जीवित शरीर आहार, जल वायु ताप और ज्योति के बिना जीवित नहीं रह सकता। इसलिए उस क्या अपने बनने और क्या बन कर जीवित रहने के लिए सूर्य्य के ताप और उस की ज्योति, जल, वायु और कई प्रकार की आहारीय वस्तुओं की जरूरत होती है। फिर उद्भिद् जगत् भौतिक जगत् के बिना जीवित नहीं रह सकता। और पशु और मनुष्य जगत् के जीव

उद्भिद् जगत् के बिना जीवित नहीं रह सकते। जब तक कि पशु जगत् में जो जीव मांसाहार के द्वारा जीते हैं, वह भी अपने जीने के लिए जिन जीवों का मांस भक्षण करते हैं, वह जीव उद्भिद् के आसरा पर आसरे जीते हैं। इस प्रकार नेचर के यह चारों जगत् एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। मनुष्य जगत् को अपने जगत् के भिन्न शेष तीनों जगतों की आवश्यकता है, और वह सभी उसके बहुत निकट के सम्बन्धी हैं इतने निकट के सम्बन्धी कि वह उन से अपना सम्बन्ध काट कर किसी तरह जी नहीं सकता।

अब हमें यह देखना है कि क्या इन चारों जगतों में परस्पर कई प्रकार के मेल के भिन्न किसी प्रकार का कोई अमेल भी पाया जाता है? यदि पाया जाता है, तो किस २ प्रकार का?

सब से पहले हम मनुष्य जगत् की ही नाना जातियों और उस के नाना सम्प्रदायों और नाना वर्णों और नाना वंशों के मनुष्यों को सम्मुख लाते हैं, और देखना चाहते हैं कि क्या वह सब एक दूसरे के साथ मेल की अवस्था में हैं? इस प्रश्न के उत्तर में हमें कहना पड़ता है कि "नहीं"। मनुष्य जगत् के लोग अपने २ नीच अनुरागों और अपनी २ नीच घृणाओं के द्वारा एक दूसरे के लिए नाना प्रकार से हानिकारक बन कर अमेल की दशा में हैं। वह एक दूसरे के अधिकारों या हक्क को एक वा दूसरी विधि से छीन रहे हैं। वह एक दूसरे को अपने विविध प्रकार के पाप कर्मों के द्वारा सता रहे हैं, और एक दूसरे की शान्ति को भंग कर रहे हैं। यदि उन के परस्पर के सम्बन्ध में उन के नाना प्रकार के अपराधों या दुष्ट कर्मों को, जहां तक सम्भव हो दबाए रखने के लिए एक वा दूसरे प्रकार की कोई "गवर्नमेंट"

ना "शासन विधि' न हो, तो वह पर दूसरे के लिए और भी जितने अंश बढ़ चढ़ कर दुखदाई और हानिकारक बन गया है उस का अनुमान किया जा सकता है। फिर इसी मनुष्य जगत् के नाना मनुष्यों का अपने से नीचे के जगतों के नाना अस्तित्वों के साथ जैसा कुछ महा भयानक सम्बन्ध पाया जाता है, उस को भी हम अपने सम्मुख ला सकते हैं। नाना मनुष्य पशु जगत् के जीवों को अपनी हिंसा भाव की तृप्ति के लिए अथवा उन का मांस खाने के लिए अथवा उन की शारीरिक विविध वस्तुओं को काम में लाने के लिए या "ईश्वर' या किसी अन्य देवता या देवी की बलि देने के लिए उन की जिस प्रकार से हत्या करते हैं, और अपने कौतुक या किसी कुसंस्कार या क्रोध या प्रतिशोध आदि भावों के वशीभूत होकर जिस २ प्रकार उन पर और अत्याचार करते हैं, और लाखों लोग उन के पालन में अपना मूर्खता या कर्त्तव्य बोध विहीनता के कारण उन्हें जिस २ प्रकार सताते और हानि पहुँचाते हैं, उन की यह सब नीच क्रियाएं उन के और पशुओं के परस्पर के सम्बन्ध में अमेल की दशा का साक्षात् प्रमाण है।

इसी तरह बिना उचित कारण के नाना मनुष्य विविध प्रकार के पौदों या वृक्षों या उन की शाखों या उन के पत्तों या उन की कलियों या उन के फूलों और फलों आदि को तोड़कर अथवा पौदों का पालन कर और सामर्थ्य रखने पर भी उन की विविध प्रकार की आवश्यक देख भाल और रक्षा न करके उन को जिस २ प्रकार से हानि करते हैं, और लाखों लोग अपने २ घरों, उन की दीवारों उनके फर्श, उन की छतों, उन की मोरियों

न हो ?

उत्तर। बेशक। ऐसी अवस्था है, और उस में ऐसी अवस्था का होना लाज़मी भी है।

प्रश्न। क्यों कर।

उत्तर। नेचर के अच्छिन्न परिवर्तन चक्र में जैसे उस के प्रत्येक जगत् में से नाना अस्तित्व पतित दशा को प्राप्त होकर उन्नति वा विकास के पथ पर नहीं चल सकते, वैसे ही उन में से जो २ अस्तित्व जहां २ तक अधिक से अधिक उन्नत वा विकसित होने की योग्यता रखते हैं वहां २ तक वह उन्नत वा विकसित होकर एक दूसरे के सम्बन्ध में कम हानिकारक और अप वा अधिक हितकर वा सेवाकारी बन कर अमेल से निकल कर अपेक्षाकृत मेल की अवस्था को ग्रहण करते हैं। यह क्रम कभी बंद नहीं होता, क्योंकि नेचर में परिवर्तन का कार्य्य अच्छिन्न है इसलिए उस के इस निर्माण वा विकासकारी कार्य्य में एक ऐसी अवस्था वा मंजिल का होना ज़रूरी है, कि जिस में उस के चारों जगतों के वह सब अस्तित्व जो इस मंजिल में पहुंचने की योग्यता रखते हों, वह एक दूसरे के लिए अपनी प्रत्येक क्रिया के विचार में पूर्णतः हितकर वा सेवाकारी बन जावें, और आपस में पूर्ण मेल की अवस्था ग्रहण करें, और इस पूर्ण मेल की अवस्था में एक दूसरे के भावी विकास के पथ में सहायक बनें।

प्रश्न। ऐसे मेल प्राप्त लोकों में तो बहुत कम संख्या में वृक्ष, पशु और मनुष्य पहुंचते होंगे।

उत्तर। निश्चय, परन्तु नेचर में यह उस का निर्म्माण वा विकासकारी कार्य्य और उसके द्वारा उस के सारा जगतों में अन्मल का क्रमशः विनाश और मेल का प्रकाश और इस मेल की अवस्था में उन के परस्पर परम शान्ति और एक दूसरे के भावी विकास में सहायकारी बनने का दृश्य जितना विचित्र, जितना विलक्षण, जितना सुन्दर और जितना महान है उस से बढ़ कर कोई मनुष्य किसी और दृश्य की कल्पना तक नहीं कर सकता।

प्रश्न। इस में कोई सन्देह नहीं।

उत्तर। जी हाँ। इसलिए जो मनुष्य इस दृश्य के देखने के और इस से भी बढ़ कर उस के प्रति जहां तक सम्भव हो, आकृष्ट वा अनुरागी होने, और अपने अनुराग के अनुसार उस के लिए अपना (वास्तव में नेचर का) सब कुछ अर्पण करने और ऐसे समर्पण से अपनी निर्म्माणकारी शक्ति की रक्षा और उन्नति करने के योग्य हो, वहां तक वह अवश्य सौभाग्यवान है और वहां तक वह अवश्य अपने मनुष्यत्व को सुफल करता है। इस के विरुद्ध यदि कोई जन अपनी पतनकारी शक्तियों के सम्बन्ध में अज्ञानी और अबोध हो, अथवा उन से सत्य मोक्ष का अभिलाषी न हो, और नेचर से ही प्राप्त अपनी शारीरिक और आत्मिक शक्तियों और धनादि विषयक नेचर के ही विविध पदार्थों को उस के निर्म्माणकारी कार्य्य के लिए अर्पण कर के उस के विविध जगतों के नाना अस्तित्वों के लिए हितकर वा सेवाकारी बनना न चाहता हो, और नेचर

जो इस सच्ची विधि के द्वारा अपने आत्मा की निर्म्माण शक्ति को विकसित करने की आकांक्षा न रखता हो, तो उस से बढ़ कर अन्धा, अभागा मूर्ख और कृपापात्र कोई और नहीं हो सकता।

मालवा स्टीम प्रैस मोगा मे श्री स्वर्ण लाल 'जोशी" मैनेजर वा
प्रिंटर द्वारा छपी और श्रीमान् ईश्वर सिंह जी कर्म्मचारी दल
समाज मोगा द्वारा प्रकाशित हुई।